महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० **अंक** : १०

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: ज्येष्ठ शुक्ल २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.
त्रिवार्षिक-५८० रु.
आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

मई द्वितीय २०१८

अनुक्रम

०१. विघटन की राजनीति का....	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-६	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. माता निर्माता भवति	कन्हैयालाल आर्य	१६
०५. मानसिक स्वास्थ्य	आ. उदयवीर शास्त्री	१९
०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२२
०७. मन: सत्येन शुध्यति	तपेन्द्र वेदालङ्कार	२४
०८. गुरु का शिष्य के नाम पत्र		३०
०९. तीन रत्नों की सामर्थ्य से सुक्रतु...	महात्मा चैतन्यस्वामी	३२
१०. शङ्का समाधान- २५	डॉ. वेदपाल	३५
११. संस्था-समाचार		३६
१२. पं. तुलसीराम जी स्वामी	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	३६
१३. स्वामी रामेश्वरानन्द जी	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	३७
१४. चौधरी चरणसिंह: एक विलक्षण...	डॉ. वेदपाल	३८
१५. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

विघटन की राजनीति का षड्यन्त्र क्यों?

सत्ता के लिए राजनीतिक लाभ को दृष्टिगोचर रखते हुए स्वतन्त्रता के बाद जिस प्रकार की विघटनकारी शक्तियों को पाला-पोसा गया और शुद्ध राजनीतिक स्वार्थों की सिद्धि की गई, आज उनके कारण देश और समाज की दशा और भी भयावह हो गई है। सरकारें आती हैं, सरकारें जाती हैं लेकिन संवैधानिक व्यवस्था के कारण राष्ट्र वहीं विद्यमान रहता है। मातृभूमि और समाज का विघटन किसी भी राष्ट्रवादी को स्वीकार भी नहीं होना चाहिए। वर्तमान में राजनीतिक विद्वेष के वशीभूत होकर सामाजिक समरसता को नष्ट करने की दुर्नीति के लिए विभिन्न विघटनकारी मुद्दों को उछालकर समाज में आक्रोश की अग्नि को छलपूर्वक प्रदीप्त किया गया, यह किसी भी प्रकार स्वीकार्य नहीं हो सकता। पिछले दिनों जिस प्रकार रोहिंग्या घुसपैठिए मुसलमानों का मुद्दा उठाया गया, उनके लिए दया और भावना का सहारा लेकर राजनीतिक पार्टियों ने निर्भीकता से और बेशर्म होकर उनके संरक्षण की बात की जिसमें राष्ट्रीय सुरक्षा को पूर्ण रूप से तिलांजलि दे दी गई। जिस प्रकार अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का ढोंग फैलाकर इस्तीफा देने और पुरस्कार लौटाने की कुत्सित राजनीतिक घटनाएं देखने को मिलीं, जिस प्रकार गुजरात, महाराष्ट्र, बिहार, मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति-जनजाति के वर्गों को आरक्षण रद्द करने की अफवाह फैलाकर वोट बैंक के रूप में उनके विद्रोह को हिंसात्मक दिशा देने का प्रयास किया गया, हिन्दू आतंकवाद का नारा जिस मनमोहन सरकार के समय उभारकर तुष्टीकरण की राजनीति को पोषित कर वोट बैंक को सुरक्षित रखने का षड्यन्त्र किया गया और इसी प्रकार बलात्कार की घटनाओं ने मानवता को शर्मसार किया है। उस पर भी विभिन्न पार्टियाँ राजनीतिक रोटियाँ सेकने से बाज नहीं आतीं। ये घटनाएं राष्ट्रीय सुरक्षा और सामाजिक समरसता को विध्वंस करने की सोची-समझी चाल के ही उदाहरण हैं। हम समझते हैं कि सत्ता का मोह प्रबल होता चला जा रहा है, जिसके कारण राजनीतिक दल लोकतान्त्रिक पद्धति को भी प्रदूषित करते जा रहे हैं।

क्या वर्तमान सरकार का बहुमत से सत्ता में आना इस देश की संसदीय लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर सबसे बड़ा कुठाराघात है? या उन राजनीतिक पार्टियों, जिन्होंने जाति, संप्रदाय, भाषा, प्रान्त, लिंग-भेद के आधार पर तुष्टीकरण की राजनीति करते हुए सत्ता पर काबिज होने के विभिन्न उपक्रम किए हैं, उन पर कुठाराघात हुआ है? कहीं न कहीं स्वार्थवश जिस प्रकार शासक दलों द्वारा भ्रष्टाचार को संपूर्ण समाज में रोपित किया गया था, अब उसके संरक्षण के लिए ही विभिन्न राजनीतिक पार्टियाँ एक होकर सरकार के विरुद्ध विभिन्न प्रकार के षड्यन्त्रों में लिप्त होती जा रही हैं, ऐसा स्पष्ट दिख रहा हैं। यह सत्य है कि राजनीतिक पार्टियाँ सत्ता-प्राप्ति के प्रति ही सजग रहती हैं और लोकतन्त्र में बहुदलीय व्यवस्था में यह स्वाभाविक भी है, लेकिन क्या बच्चियों से बलात्कार और फिर उनकी हत्या जैसा निकृष्ट और घोर निन्दनीय कृत्य, पुनश्च उस पर साम्प्रदायिकता को भड़काना यदि सत्ता प्राप्ति का मार्ग है, तो हमें मान लेना चाहिए कि लोकतन्त्र की हत्या हो चुकी है।

स्वतन्त्रता के बाद जिस प्रकार तत्कालीन सरकारों ने उत्तर और दक्षिण का भेद करके भारतीयता को खण्डित करने के प्रयास किए थे। जिसका परिणाम था कि पं. नेहरू के समय 1962 में ही सी.एम. अन्नादुरई ने संसद में विवादित भाषण देकर देश की अखण्डता के बारे में सोचने पर बाध्य कर दिया था। अपने भाषण में उन्होंने राष्ट्र की नई परिभाषा तय करने का विचार दिया था। यह उत्तर-दक्षिण का विभाजन, हिन्दी और दक्षिणी भाषाओं का मुद्दा, भारत के मूल निवासी द्रविड़ हैं, आर्य बाहर से आए इत्यादि कितने ही प्रकरण हैं जिन्हें उछालने और जिनसे लाभ लेने के लिए विघटनकारी शक्तियाँ मुँह बाये खड़ी रहती हैं। इनका स्थायी समाधान तो इन दलों से हो नहीं हो सका, लेकिन तुष्टीकरण की नीति अपनाकर अपने राजनीतिक हितों को साधने का प्रयास विभिन्न पार्टियाँ चुनावों के समय पर करती रहीं। यह स्पष्ट है कि पृथकतावादी शक्तियाँ भारत को एकसूत्र में बँधे

देखना नहीं चाहतीं और इसकी प्रक्रिया द्विराष्ट्र के सिद्धान्त के परिणामस्वरूप हुए भारत के विभाजन से भली प्रकार समझी जा सकती है। तेलुगु देशम पार्टी के सांसद मुरली मोहन का आजादी का नारा किसी भी प्रकार समुचित नहीं माना जा सकता। एक लोकतान्त्रिक देश में जहाँ संसदीय लोकतन्त्र स्थापित है, वहाँ क्षुद्र स्वार्थों के लिए भारत की एकता और अखण्डता को तार-तार करने के कुत्सित प्रयासों को कदापि स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

अभी हाल ही में कर्नाटक की कांग्रेस सरकार द्वारा राज्य के हिन्दू धर्म में परिगणित लिंगायत समुदायों को हिन्दू धर्म से पृथक् अल्पसंख्यक का दर्जा देने का निर्णय इसी विघटनकारी सोच का एक और उदाहरण है, और इसमें संविधान के अनुच्छेद 29 और 30 के अन्तर्गत प्रदत्त अधिकारों और सुविधाओं को अल्पसंख्यकों द्वारा उपभोग करने का ही तर्क दिया जाता है। एक अजीब-सा तर्क देखिए कि इन अल्पसंख्यक संस्थानों में संविधान में निर्दिष्ट अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़े वर्ग को किसी भी प्रकार आरक्षण देने के लिए कोई बाध्यता नहीं है। तो क्या केवल कुछ सुविधाओं के लिए लिंगायतों को हिन्दू धर्म से पृथक् कर अल्पसंख्यक समुदाय का दर्जा देने से सामाजिक विषमता और हिन्दू धर्म में विघटन की प्रक्रिया को बढ़ावा नहीं मिलेगा? और ऐसे तो कितने ही समुदाय हैं जो टुकड़ों-टुकड़ों में अल्पसंख्यक का दर्जा दिए जाने की मांग निरन्तर करते रहे हैं। क्या लिंगायत समुदाय पशुपतिनाथ के पुजारी का पद त्याग देगा? क्या लिंगायत समुदाय, जो कि पिछड़े वर्ग में सम्मिलित है, बनारस के विश्वनाथ मंदिर की आरती और शिव की आराधना की परम्परा को भी त्याग देगा? यह कांग्रेस पार्टी की उस सोच का परिणाम है, जिसमें **बाँटो और राज करो** की ध्वनि परिलक्षित होती है, इसे भारतीय समाज कदापि स्वीकार नहीं करेगा। धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में धर्म के आधार पर विशेष सुविधाएँ देने से राष्ट्र धर्मनिरपेक्ष कैसे हुआ?

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ-प्रकाश में सार्वभौमिक राष्ट्र की बात की है। उसमें भारत राष्ट्र की संस्कृति में विघटन के प्रयासों को हमेशा के लिए नष्ट करने का आह्वान है, वहाँ एकरूपता पर बल है। आर्यजगत् ऐसे किन्हीं भी विघटनकारी और विषमतावादी मुद्दों के आधार पर भारत की एकता और अखंडता को तोड़ने का विरोध करता रहा है और करता रहेगा। बल्कि अब तो उसका पुरजोर विरोध ही नहीं किया जाएगा अपितु यदि सड़कों पर उतर कर आना होगा तो वह भी किया जाएगा। इतिहास साक्षी है कि राष्ट्रीय हितों के लिए आर्यसमाज ने सर्वदा बलिदान का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसे राष्ट्रीय आन्दोलन से ही नहीं अपितु स्वतन्त्रता के पश्चात् भी गौ-हत्या एवं हिन्दी रक्षा सत्याग्रह के प्रकरण से भली प्रकार समझा जा सकता है।

वर्तमान में विघटनकारी राजनीति का क्रूर चेहरा विभिन्न तथ्यों के साथ हमारे समक्ष है। आश्चर्य का विषय है कि तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग, मीडिया, वकील, शिक्षक इत्यादि, जिन्हें यह माना जाता है कि वे राष्ट्रीय अस्मिता और संविधान-गौरव के विरुद्ध कुछ भी सहन नहीं कर पायेंगे, वे धृतराष्ट्र की सभा में जिस प्रकार भीष्म, द्रोण और विदुर मौन और निष्प्रभावी थे वैसे ही मूक दिखाई पड़ते हैं। अभी हाल ही में कांग्रेस के नेतृत्व में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश महोदय के विरुद्ध महाभियोग को प्रस्तुत करने की एक और विघटनकारी घटना उपस्थित हुई। दुखद तो यह है कि खुद कांग्रेस पार्टी के ही डॉ. मनमोहन सिंह, सलमान खुर्शीद, अश्विनी कुमार आदि प्रमुख कानूनविद और पूर्व मुख्यमन्त्री तक ने अपनी सहमति इसके समर्थन में व्यक्त नहीं की। ममता बनर्जी, तेलुगु देशम पार्टी इत्यादि अनेक पार्टियों ने कांग्रेस के इस दुष्प्रचार का समर्थन नहीं किया है। क्या केवल जज लोया का केस, हैदराबाद न्यायालय का हिन्दू अभियुक्त के पक्ष में दिया गया निर्णय और अभी माया कोडनानी के संबन्ध में गुजरात में दिया गया निर्णय ही सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के विरुद्ध महाभियोग का कारण बन सकता है?

ध्यातव्य है कि स्वतन्त्रता के पश्चात् सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के विरुद्ध लाया गया यह पहला प्रकरण है और समझा जा सकता है कि हताशा, भय, कुण्ठा और चुनावों में संभावित पराजय की आहट को सुनकर ही सोची-समझी नीति के तहत यह कदम उठाया गया है। अभी तो अन्य संवेदनशील मुद्दों, यथा राम मंदिर का मुद्दा, तीन तलाक का मुद्दा, रोंहिग्या मुसलमानों का मुद्दा, आधार कार्ड का मुद्दा सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन हैं, जिन पर निर्णय लिया जाना अपेक्षित है। क्या इन मुद्दों पर इच्छानुसार

निर्णय या कार्रवाई के लिए ही न्यायपालिका को धमकाकर दबाव में लिया जा रहा है? जो राजनीतिक पार्टियाँ न्यायपालिका का सम्मान करने का दावा भरती हैं, न्यायपालिका के निर्णय को मानने की घोषणा करती रही हैं और फिर अपने विरुद्ध या मनमाफिक निर्णय न आने पर उसी न्यायपालिका के विरुद्ध खड़े होकर भारत में असंतोष और विघटन को तीव्र हवा देने का प्रयास करती हैं। उनका यह प्रयास क्या राष्ट्र के प्रति षड्यन्त्र प्रतीत नहीं होता? शायद जनता इस षड्यन्त्र को समझती है, इसीलिए ऐसे मुद्दों पर कोई आन्दोलन नहीं हुआ, जनसमर्थन नहीं मिला।

महर्षि के शिष्यवर्ग ने हमेशा इस प्रकार के देश-विरोधी, समाज-विरोधी, संविधान-विरोधी और भारतीय संस्कृति के विरुद्ध रचे गए किन्हीं भी सुनियोजित षड्यन्त्रों के विरुद्ध खड़े होकर सत्य के पथ का अवलम्बन किया है। महर्षि दयानन्द ने पदे-पदे न्याय के पथ पर चलने का निर्देश ही नहीं दिया अपितु उनका संपूर्ण जीवन ही इसी भावना पर आधारित रहा। यह निश्चित है कि संसदीय लोकतन्त्र में विविध राजनीतिक दल अपने सिद्धान्तों के अनुसार राजनीति करते हैं, लेकिन अब यह स्पष्ट हो चुका है कि कभी दलित-विमर्श के नाम पर, कभी नारी-विमर्श के नाम पर, कभी रोंहिग्या मुसलमानों के नाम पर समाज को बाँटने तथा साम्यवादियों के साथ मिलकर राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान की रचनात्मक राजनीति के विरुद्ध जाकर भारतीय सामाजिक और राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को तार-तार करने की सोची-समझी चालें चली जा रही हैं। चुनावों के समय ऐसी घटनाओं की बहुलता सन्देह को और पुष्ट करती है।

बुद्धिजीवियों और जागरूक नागरिकों का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वे भारत की अस्मिता, अखण्डता, सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक धरोहर को संजोने का कार्य करें और ऐसे किसी भी प्रकार के षड्यन्त्र का किसी भी प्रकार समर्थन न करते हुए राष्ट्रहित को ही सर्वोपरि मानें। तभी भारत-विरोधी शक्तियों को सबक सिखाया जा सकेगा।

राष्ट्र अर्थात् राष्ट्र की प्रजा का कल्याण राजनीतिक दलों की प्राथमिकता यदि नहीं होगी, तो वे राजनीतिक दल और उनके नेता स्वार्थों के लिए प्रजा की सुख-समृद्धि और समरसता के लिए प्रयत्न करना तो दूर, प्रत्युत उनका नाश ही करेंगे और राष्ट्रीय धन-सम्पत्ति को लूटेंगे, क्योंकि ये क्षुद्र स्वार्थों में लिप्त जन कल्याणकारी, अखण्ड और बृहद् राष्ट्र की संकल्पना से रहित होते हैं। ये पशुवत् ही होते हैं जो मात्र अपना स्वार्थ ही देखते हैं। शास्त्र कहता है-

राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तस्माद्राष्ट्री विशं घातुकः।
विशमेव राष्ट्रायाद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमत्ति,
न पुष्टं पशुं मन्यत इति।। शतपथ ब्राह्मण।।

- दिनेश

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

मृत्यु सूक्त-६

प्रवचनकर्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां, यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि, मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्।।

हम इस वेद ज्ञान के प्रसंग में देख रहे थे कि मन्त्र कहता है-हे मृत्यु! तुम देवयान मार्ग को छोड़ जाओ। यह तुम्हारा रास्ता नहीं है। तुम दूसरे मार्ग पर जाओ और दूसरा मार्ग जिसका नाम हमने पितृयाण कहा था, वही तुम्हारा मार्ग है। हमारे दुःख का जो मूल कारण है, उस पर विचार किया जाये तो मृत्यु में दुःख का कारण और कुछ भी नहीं है, न मेरा अपना आत्मा और न अलग से यह शरीर। **मृत्यु में दुःख का कारण है आत्मा और शरीर का एक समझा जाना, एक माना जाना।** इसलिए मृत्यु दुःख का कारण है। हमने देखा था कि जो पाँच दुःख हैं-अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश, उनमें मृत्यु सबसे बड़ा दुःख है। जब दुःख है तो यहाँ एक और बात सोचने की है कि दुःख किसी अभाव का नाम है। मनुष्य के साथ जितने दुःख हैं, वे दुःख कोई सकारात्मक चीज़ नहीं हैं, तथ्यात्मक वस्तु नहीं हैं, वे केवल अभावात्मक हैं। कोई निर्बल है तो इसका अभिप्राय है कि वह बलहीन होने से दुःखी है। कोई निर्धन है तो धन के अभाव से दुःखी है। कोई बुद्धिहीन है तो ज्ञान के अभाव से दुःखी है। कुछ भी संसार में जिसे नहीं मिला है, वो दुःखी है। हर मनुष्य को देखा जाए तो किसी न किसी वस्तु का अभाव है। संसार की असंख्य वस्तुएँ किस आदमी के पास हैं? यदि अभाव से ही दुःख कहें, तो सबको सदा दुःखी रहना चाहिए, किन्तु ऐसा होता नहीं है। हम हर समय हर वस्तु के लिए दुःखी होते नहीं हैं। हमको एक समय में कोई एक वस्तु ही दुःखी करती है। कभी हम यान के, गाड़ी के अभाव में दुःखी होते हैं। कभी हम घर के अभाव में दुःखी होते हैं, कभी हम स्वास्थ्य के अभाव में दुःखी होते हैं, कभी किसी वस्तु, किसी व्यक्ति के अभाव में दुःखी होते हैं। हर समय सारे दुःख एकसाथ हमारे अनुभव में नहीं आते। इसलिये यह जो अभाव है, ये यदि दुःख का कारण है, तो दो परिस्थितियाँ हमारे सामने हो सकती हैं एक तो यह कि किसी चीज़ की मुझे आवश्यकता है और मुझे मिल नहीं रही है। आवश्यकता होने पर जब किसी वस्तु की याद करता हूँ किसी वस्तु का स्मरण करता हूँ, वो वस्तु मेरे पास सुलभ नहीं है। मुझे भूख लगी है और मेरे आस-पास भोजन की कोई व्यवस्था नहीं है, मेरे पास कोई साधन नहीं है- न पैसे के रूप में, न खाद्य पदार्थ के रूप में, न किसी सहायक के रूप में। तब निश्चित रूप से मैं दुःख और कष्टों में घिर जाऊँगा।

एक परिस्थिति और होती है- मेरे पास है तो नहीं, किन्तु मुझे चाहिए भी नहीं। हिमालय मेरा नहीं है, लेकिन मुझे हिमालय का कुछ करना भी नहीं है। शेर मेरे पास नहीं है, लेकिन शेर का मैं करूँगा भी क्या? इसलिये अभाव में हर समय दुःख नहीं है, अभाव में अपेक्षा से दुःख होता है, यदि निरपेक्ष हो जाओ तो अभाव आपको दुःखी नहीं कर सकता। दो प्रकार से इस अभावजन्य दुःख से बचा जा सकता है- संसार में या तो आप किसी वस्तु को पा लो, तो आप दुःख से मुक्त हो जाओगे या किसी वस्तु से निरपेक्ष हो जाओ, चाहो ही मत, तब भी आपको कोई दुःखी नहीं कर सकता।

इस मृत्यु के दुःख से बचने का दोनों में से क्या उपाय हो सकता है? या तो मुझे अमरता मिल जाए, या मुझे मृत्यु की परवाह ही समाप्त हो जाए। मुझे अमरता मिल जाए, ऐसा तो हो नहीं सकता क्योंकि जन्म हुआ है तो मृत्यु न हो, ऐसा नहीं हो सकता। एक विकल्प तो समाप्त हो गया, अब दूसरा विकल्प बचता है कि यह होने पर भी क्या मैं बिना दुःखी हुए रह सकता हूँ? यह विकल्प संभव है। यदि मुझे यह पता लग जाए कि इस मृत्यु से मेरा कुछ भी बनता-

बिगड़ता नहीं है, क्योंकि इस जन्म ने मेरा कुछ नहीं बनाया। आत्मा के स्वरूप में कोई बदलाव नहीं आया और यह शरीर=जीवन चला जाएगा तो भी आत्मा के स्वरूप में कुछ भी बदलाव नहीं आएगा। मुझे जो सुख-दुःख मिल रहा है, वो इस शरीर के कारण हो रहा है, शरीर से हो रहा है। जब तक मैं इस शरीर से जुड़ा रहूँगा, तब तक मैं दुःख से छूट नहीं सकता। योगदर्शनकार ने एक बड़ी सुन्दर बात कही है कि जब तक आपके अन्दर अभाव नामक चीज़ का एक अंश भी विद्यमान है, कोई इच्छा, कोई बात आपके अन्दर बची हुई है, वो दुःख है। वो दुःख जब तक आपके अन्दर है या कोई संस्कार है किसी चीज़ को पा लेने का, देने का, तो फिर आपके आत्मा में वो संग्रहीत है और बहुत बड़ा है, विस्तृत है। **''क्लेश मूलः कर्माशयः दृष्ट अदृष्ट जन्म वेदनीयः।''** यदि जन्म हुआ है तो क्लेश के कारण, हमारे दुःखों के कारण, अर्थात् अभी हमारे दुःख बचे हैं, वो कर्माशय है, उसके कारण से हमको जन्म मिलता है, क्योंकि वो क्लेश तो भोगने ही हैं, वो दुःख तो भोगने ही हैं। कहता है कि यह जाति है, आयु है, भोग है, वो हमारे इन क्लेश के मूलों से है। घोड़ा है, गधा है, कुत्ता है, मनुष्य है, गाय है, भैंस है, पशु हैं, पक्षी हैं, ये जातियाँ है जो जन्म से जानी जाती हैं, जो जन्म के आधार पर पहचानी जाती हैं। आयु अर्थात् शरीर और आत्मा कितने काल तक विद्यमान रहते हैं, उसको हम आयु कहते हैं, जीवन कहते हैं और वो जीवन हमारा सबका एक जैसा नहीं होता। उसमें हज़ारों भिन्नतायें होती हैं। कोई धार्मिक है, कोई अधार्मिक है, कोई पुण्यात्मा है तो कोई अपुण्यात्मा है, कोई रोगी है, कोई स्वस्थ है, कोई दुःखी है, कोई सुखी है, कोई अच्छा है, कोई बुरा है। किसी के पास साधन बहुत हैं, किसी के पास साधन नहीं हैं, कोई साधनों से सन्तुष्ट है, नहीं है। इनके कारण से हमारा यह चक्र सदा चलता रहता है। हम कभी सुखी, कभी दुःखी, कभी अच्छे, कभी बुरे बनते ही रहते हैं।

समझने की बात है कि हम इस मृत्यु रूपी क्लेश से, जीवन के क्लेशों से मुक्त होना चाहते हैं तो उसके कारणों पर विचार करें, उसके आने की प्रक्रिया को समझें, उसके कारण आपको पता लग जायेंगे तो मुक्ति के उपाय भी पता लग जायेंगे। विचार करने की आवश्यकता है कि आपने ये कैसे पाया है?

एक व्यक्ति है उसके घर में एक सन्तान का जन्म हुआ है, यह उसकी प्राप्ति है। प्राप्ति होने के बाद उसने कहा-यह मेरा है। यह मैं ही हूँ। वह जो कुछ व्यवहार कर रहा है उसके साथ 'मेरा' मानकर कर रहा है। उसके अन्दर एक चीज़ पैदा हो जाती है जिसे हम स्थूल भाषा में कहते हैं मोह, लगाव, आसक्ति। यह जो आसक्ति है ये बढ़ती रहती है। आसक्ति में बाधा कब आती है? जब वो वस्तु उससे दूर चली जाए, उसके अधिकार से छिन जाए। एक अधिकारी किसी कार्यालय में स्थानान्तरित होकर, बदली होकर आ जाता है। काम को करने लगता है। लेकिन जब स्थानान्तरित होकर फिर वहाँ से जाता है तो वहाँ का कुछ लेकर नहीं जाता, केवल अपने अनुभव लेकर जाता है। उस समय जाते हुए उसे कष्ट नहीं होता क्योंकि आकर के उसने अपने को बाँधा नहीं था, अपने साथ मोह जोड़ा नहीं था। उसे पता था कि पीछे से भी आया हूँ, यहाँ से भी चला जाऊँगा। वैसे ही यदि व्यक्ति किसी भी काम को करे, किन्तु उसे हानि-लाभ के रूप में, मेरे-अपने के रूप में, अच्छे-बुरे के रूप में बाँधे नहीं, आसक्ति में न पड़े, मोह में न पड़े तो उसे कोई दुःख नहीं होता, कोई दुःख हो ही नहीं सकता।

जब मृत्यु की चर्चा होती है, तो हम एक बात देखते हैं-लोग कहते हैं मृत्यु दुःख का कारण है, शास्त्र भी कहता है कि मृत्यु दुःख का कारण है। लेकिन एक सोचने की बात है कि यदि मृत्यु ही दुःख का कारण है तो हर मृत्यु पर मनुष्य को दुःख होना चाहिए। पता नहीं कितनी मृत्यु होती हैं, और आश्चर्य की बात है कि मेरे अपने निकट के लोगों की भी मृत्यु होती है तो किसी की मृत्यु पर तो मुझे दुःख होता है और किसी की मृत्यु पर मुझे दुःख ही नहीं होता। यदि मृत्यु दुःख का कारण है, तो हर मृत्यु पर हर समय मुझे दुःखी होना चाहिए। इसी तरह से, यदि जन्म सुख का कारण है तो हर जन्म, हर समय मुझे सुख देने वाला होना चाहिए। ऐसे में तो बड़ा संकट हो जाएगा, हर

समय मनुष्य दु:खी और हर समय सुखी बना रहेगा और दोनों परिस्थितियाँ एक साथ कैसे चलेंगी? क्योंकि जब मनुष्य सुखी होता है उस क्षण दु:खी नहीं होता, जिस क्षण दु:खी होता है उस क्षण सुखी नहीं होता है। लेकिन मृत्यु यदि हर समय दु:ख को देने वाली है और जन्म यदि हर समय सुख को देने वाला है तो मनुष्य को हर समय सुखी-दु:खी होना पड़ेगा, लेकिन ऐसा होता नहीं। मनुष्य हर मृत्यु से दु:खी नहीं होता है। जो उसका निकट है, परिजन है उससे वो दु:खी होता है। जो शत्रु है, दूर है, पराया है, उससे उसे कोई दु:ख नहीं होता है।

इसलिए वास्तव में मृत्यु दु:ख का कारण नहीं है, क्योंकि जन्म सुख का कारण नहीं है। जन्म यदि सुख देने वाला होता तो शत्रु के घर में भी सन्तान उत्पन्न होने पर मुझे सुख होना चाहिए था, मगर ऐसा होता तो नहीं है। इसलिए यह समझना कि जन्म से सुख होता है और मृत्यु से दु:ख होता है, यह तात्त्विक नहीं है। तो तात्त्विक क्या है? तात्त्विक यह है कि जन्म यदि मेरे से जुड़ा हुआ है तो सुख का कारण है और मृत्यु मुझसे सम्बद्ध है तो दु:ख का कारण है। मेरा निकट का, मेरा जिससे स्वार्थ, सहयोग, प्रेम, सुख जुड़ा हुआ है, यदि वो जाता है तो मुझे दु:ख होता है। लेकिन शत्रु जाता है तो मुझे दु:ख नहीं होता है बल्कि सुख होता है, हर्ष होता है। इसलिए वेद कहता है कि मृत्यु के दु:ख को यदि आप समझना चाहते हो, इसके दु:ख से बचना चाहते हो तो एक बात को समझने की आवश्यकता है- कि मृत्यु का कारण स्वाभाविक है या नैमित्तिक है, स्वाभाविक और नैमित्तिक में मेरा योगदान क्या है? मेरी इच्छा से है या मेरी अनिच्छा से है? यदि मनुष्य के जीवन पर विचार किया जाए तो मनुष्य के अन्दर बहुत अंहकार होता है, वह संसार की सारी वस्तुओं में 'मैं और मेरापन' देखता है, लेकिन जो उसकी सबसे निकट की वस्तु है, जो उसकी सबसे अपनी वस्तु है वो उसका शरीर है। इसी से संसार में उसका अस्तित्व है। उसकी उपस्थिति है। इसी से दूसरे का मिलना, देखना संभव है। किन्तु आश्चर्य की बात इसमें यह है कि इसकी प्राप्ति उसके आधीन नहीं है। अर्थात् जो वस्तु, जिसे मैं स्वयं 'मैं' मानता हूँ, जो स्वयं मेरी है और जो सब कुछ इस 'मैं' से ही मैं निर्धारित करता हूँ, उसमें सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि वह 'मैं' ही मेरे हाथ में नहीं है।

व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

पता- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

एक गवेषक देवी का चलभाष- दिन को थोड़े समय के लिये जब विश्राम करता हूँ, सोता हूँ तो चलभाष बन्द करके नहीं लेटता। चौबीसों घण्टे चलभाष पर किसी से भी बात करने के लिये तत्पर रहता हूँ। १४-१५ अप्रैल को दिन के ढाई-तीन बजे एक गवेषक देवी का चलभाष सुनने को कुछ हडबड़ा कर उठा। उस दिन कुछ ऐसा हुआ कि जो मैं कहना चाहूँ वे शब्द और नाम मेरे मुँह से ही न निकलें। उस देवी ने माता भगवती पर बहुत कुछ पूछा और भी कई खोज करने वाले यथा डी.ए.वी. अमृतसर की सुश्री शशि जी ने भी मिलकर और चलभाष पर बहुत जानकारी माँगी।

मेरा सबसे निवेदन है कि माता भगवती जी पर जितनी जानकारी 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' में दी गई है इतनी अन्यत्र कहीं भी नहीं मिल सकती। माता भगवती जी पर महात्मा मुंशीराम जी ने जो ऐतिहासिक लेख लिखा था उससे आगे कोई क्या लिखेगा। उसे अनूदित करके उपरोक्त ग्रन्थ में दे दिया गया है, और भी उस ग्रन्थ में माई जी पर पर्याप्त जानकारी सप्रमाण मिलेगी। यह ग्रन्थ छप चुका है। इस लेख के छपने तक प्राप्य हो जावेगा।

कई संस्थायें और राजनीतिक दल आर्यसमाज की कीर्ति और प्रतिष्ठा को सह नहीं सकते। आर्यसमाज के ज्ञानपिपासु उत्साही मिशनरी युवकों को आर्यसमाज के इतिहास का अवमूल्यन करने वालों से साहस के अंगारे महात्मा नित्यानन्द, पं. गणपति शर्मा, पं. लेखराम और पं. नरेन्द्र बनकर टक्कर लेने को हर घड़ी तैयार रहना चाहिये।

एक और गवेषक देवी का चलभाष- परोपकारी में **आज तीसरी बार हरदेवी जी पर लिखने लगा हूँ।** एक शोध करने वाली विदुषी देवी ने हरदेवी जी पर कई प्रश्न पूछे। श्रीमान् डॉ. दिनेश जी भी आर्य ललना हरदेवी विषयक भ्रम भंजन करने के लिये लेखनी उठा चुके हैं। मैं तो कई वर्षों से उसकी चर्चा करता आ रहा हूँ। आर्यवीरो! धर्मवीर जी के वलवलों को याद करके शंखनाद करो कि हरदेवी जी आर्य वीराङ्गना थीं। लंदन में जब महर्षि के बलिदान के पश्चात् आर्यसमाज स्थापित हुआ था तो श्री रोशनलाल जी प्रधान चुने गये और ऋषिजी का प्यारा लक्ष्मीनारायण तब मन्त्री चुना गया। ये एक ही घर में रहते थे, वहीं समाज के सत्संग लगा करते थे। **उसी भवन में हरदेवी रहती थीं।** हरदेवी जी का भाई सेवाराम भी इन्हीं के पास रहता था। आर्यसमाज की गतिविधियों का सारा श्रेय इन्हीं को प्राप्त है।

दादा भाई नौरोजी भी तब आर्यसमाज के सत्संग में आते रहे। यह प्रसंग 'सार्वदेशिक' साप्ताहिक तथा 'आर्य गजट' उर्दू में छपे मेरे लेख में हर कोई खोज करके पढ़ सकता है। मूल स्रोत मेरे पास हैं। अब जो कहे कि हरदेवी ब्रह्मसमाजी थीं- आर्यसमाजी नहीं थीं, उसे अजमेर में ऋषि मेला पर शास्त्रार्थ करके अपने मत को सिद्ध करने की हमारी चुनौती है।

आर्यवीरो! देशवासियों को झकझोर कर बता दो कि हरदेवी जी ने अपने आत्म-परिचय में आर्यसमाज के सत्संग के अतिरिक्त किसी बाबा की चरण-शरण में जाने का उल्लेख नहीं किया। हरदेवी जी ने पुनर्विवाह किया। बंगाल में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर अथवा किसी ने इस विवाह का कहीं उल्लेख किया क्या?

यह भी पूछा जाता है कि उसके पिता ''कन्हैयालाल अलखधारी क्या लाहौर रहते थे?'' मेरा निवेदन है कि अलखधारी लुधियाना रहते थे। हरदेवी के पिता लाहौर रहते थे। दोनों बहुत बड़े लेखक थे, आर्यसमाज से प्रभावित थे, परन्तु आर्यसमाजी नहीं थे। रोशनलाल, लक्ष्मीनारायण, हरदेवी ये सब कायस्थ थे। लक्ष्मीनारायण मूलत: उ.प्र. के थे, परन्तु तब उनके पिता रोहतक के निकट साँपला रहते थे। वह दृढ़ आर्य पुरुष थे। ऋषि के पत्रों में लक्ष्मीनारायण जी का भी एक पत्र है।

जब लंदन में चम्बा के राजा के नौकर चन्दन सिंह के निधन पर उसकी शवयात्रा लोगों ने वहाँ देखी तो प्रेस में आर्यसमाज की धूम मच गई। उस शव-यात्रा में हरदेवी और उसका भाई सेवाराम भी मौजूद थे। यह लंदन में

पहला दाहकर्म संस्कार था। हरदेवी इस इतिहास की साक्षी बनी। हरदेवी फारसी भी जानती थी, उसी ने भारत में किंडरगार्टन शिक्षा पर सबसे पहली पुस्तक 'तालीमे तिफलां'-शिशु-शिक्षा उर्दू में छपवाई थी। रोशनलाल जी से उसके विवाह का भारत भर के कायस्थों ने घोर विरोध किया। इन दोनों ने सब विरोध सहन किया। अन्त में कायस्थों को झुककर विरोध बन्द करना पड़ा, उनको सम्मान देना पड़ा। कायस्थ पाठशाला प्रयाग की सन् १८९०-१८९९ तक की रिपोर्टें कोई खोज निकाले तो उसमें हरदेवी व रोशनलाल जी की कुछ चर्चा मिल सकती है।

अन्त में फिर बताना चाहता हूँ कि हरदेवी ने विधवाओं के उद्धार-कल्याण के लिये अपनी पैतृक सम्पत्ति (लाहौर में थी) कन्या महाविद्यालय जालन्धर को वसीयत में दी थी। अब क्या उसके आर्यसमाजी होने में कोई शङ्का शेष है? क्या देश यह नहीं जानता कि रोशनलाल जी पटियाला राजद्रोह अभियोग में महात्मा मुंशीराम जी के साथ आग से खेलते रहे? हरदेवी के संघर्षमय जीवन पर अभी और लिखा जावेगा। जानबूझकर आर्यसमाज के इतिहास को प्रदूषित व विकृत किया जा रहा है। जब तक प्राणों में प्राण है, दम्भ-दर्प को ढाते रहेंगे।

महर्षि दयानन्द का सिंहनाद सुनाओ- देश की दुर्दशा सब देशवासी देख रहे हैं। अपने मत-पन्थ का राजनीतिक व अन्धविश्वास का चश्मा लगाकर देश की समस्याओं पर देशवासी अपनी प्रतिक्रिया देते हैं। कश्मीरी हिन्दू घरों से निकाले गये, उनकी घर वापसी कैसे हो? कश्मीर में उग्रवाद पर देश कैसे नियन्त्रण करे? राम मन्दिर की बात तो बढ़-चढ़कर की जाती हैं, परन्तु बात बने कैसे? छोटी-छोटी कन्याओं का अपहरण व हत्यायें पढ़-सुनकर भले लोग रक्तरोदन कर रहे हैं।

टी.वी. पर तिलकधारी बाबे आपका भाग्य बनाने के, हर उलझन सुलझाने, नौकरी दिलाने, शत्रु पर विजय पाने, काम-धन्धा चमकाने के उपाय बताते थकते नहीं। न तो धर्माचार्य, न ही बड़े-बड़े हिन्दुत्वादी और न ही योगी, महात्मा, साधु, टी.वी. के तिलकधारी ज्योतिषियों को यह चुनौती देते हैं कि आप राम मन्दिर को बनवाने का चमत्कार करके दिखाओ, बलात्कार, हत्यायें बन्द करवाओ, कंगाली और बेकारी मिटाओ?

देशभर के ज्योतिषियों को चुनौती दी जावे कि बीस युवतियों की जन्मपत्रियों में से छाँटकर बताओ कि इस समय इन जन्मपत्रियों में कौन-कौन कुमारी है? कौन-कौन सधवा है? कौन-कौन विधवा है और कौन-कौन दिवंगत हो चुकी है? कोई ज्योतिषी यह चुनौती स्वीकार करेगा ही नहीं। कोई हिन्दू नेता, कोई साधु, शंकराचार्य आगे आकर ज्योतिषियों को ललकारेगा नहीं। पाखण्ड, अन्धविश्वास, जड़ पर विश्वास हिन्दू धर्म की जान और शान बन चुका है। सरकार पाखण्डों का पोषण करती है। आर्यसमाज को देशभर में देश को लूटने वाले, भ्रमित करने वाले और ठगी करने वाले इन ज्योतिषियों की पोल खोलनी चाहिये। ऋषि का यह सिंहनाद सुनाओ। अन्धकार मिटाओ। जाति बचाओ।

'तनासुख' और 'तमासुख'- ये दोनों शब्द अरबी भाषा के हैं। तनासुख का अर्थ है पुनर्जन्म और तमासुख का अर्थ है विकृत। मुसलमान आवागमन में विश्वास को कुफ्र मानते हैं। वे यह मानते हैं कि ख़ुदा मनुष्यों को दण्डस्वरूप उनके स्वभाव को सूअर, बन्दर, कुत्ते आदि का बनाकर उनके जन्म को विकृत कर देता है। आर्य विद्वान् पुनर्जन्म की पुष्टि व तमासुख (विकृति) के खण्डन में प्रबल युक्तियाँ देते आये हैं।

पं. लेखराम जी की पुनर्जन्म पर पुस्तक इस युग की अपने विषय की पहली और सर्वोत्तम पुस्तक मानी जाती है। इसकी धाक और गहरे प्रभाव पर लिखने के लिये बहुत विस्तृत लेख चाहिये। आर्यसमाज आज नहीं जानता कि इस पुस्तक ने पुनर्जन्म-विरोधियों की सोच को इतना बदल दिया है कि हिन्दू लोग (सब सम्प्रदायों के) कल्पना भी नहीं कर सकते। सर सैयद को भी मानना पड़ा कि तमासुख़ की पुष्टि तो कुरान से भी नहीं होती। पं. रामचन्द्र की कोटि के आर्य दर्शनिक ने भी तमासुख के खण्डन में ऐसा अनूठा बेजोड़ तर्क नहीं दिया जैसा पूज्य पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय जी ने दिया है। इस युक्ति ने अभी-अभी मेरा ध्यान खींचा है। अल्लाह हृदय (स्वभाव) बदल सकता है तो क्या वह शरीर नया नहीं दे सकता? यह अत्यन्त सरल व मौलिक तर्क किसी ने आज तक नहीं

दिया। किसी ने कभी दिया हो तो गुणी पाठक मुझे पता दें।

उपाध्याय जी के तर्क के साथ मैंने जोड़ा है कि इस्लाम ख़ुदा को **कादरे मुतलक** (जो चाहे कर सकता है) मानता है तो फिर विकृत करने की बजाय वह नया शरीर भी तो दे सकता है। उसे कौन रोकता है। पं. लेखराम जी के ग्रन्थ से क्या क्रान्ति आई और क्या भूकम्प मचा है यह अब 'कुल्लियात' में मेरे परिशिष्ट से संसार जानेगा। हिन्दू फिर भी इस उपकार को सम्भव है न माने। इस्लाम ने जान भी लिया है, मान भी लिया है। परोपकारिणी सभा ने इस संस्करण के प्रकाशन का निर्णय लेकर आर्यसमाज की प्रतिष्ठा को चार चाँद लगाने का कार्य किया है।

अन्धकार में प्रकाश-किरण- देश और संसार में खोटे कर्मों के, पाप के, दुराचरण के दण्ड से बचाने, क्षमा करवाकर स्वर्ग में बहिश्त में पहुँचाने की गारण्टी देने वाली बहुत सी Agencies (अड्डे) हैं। डॉ. गुलाम जेलानी जी के अनुसार अल्लाह ने कब्रों के मुर्दों के मजावरों के हाथों में अपने सर्व अधिकार (Attorney) सौंप रखे हैं। जिसे चाहें क्षमा कर दें और जिसे चाहें नरक में पहुँचा दें। केरल में तो बरकला नाम के स्थान पर सागर को ही हिन्दू पापनाशम मानते हैं। ऐसे-ऐसे अन्धविश्वासों में अन्य मतवादी भी पीछे नहीं, परन्तु योग की, कर्मफल-सिद्धान्त की, न्याय दर्शन की दुहाई देने वाले हिन्दू भी सागर को पापनाशम मानें तो अचम्भा होता है। ऋषि दयानन्द ने पाप क्षमा करने की मिथ्या मान्यता की धज्जियाँ जब उड़ाईं तो इस्लाम में भी ऋषि की प्रकाश-किरण ने अपनी रंगत दिखाई। महाकवि अकबर ने लिखा है-

''हशर में तो नामःय आमाल देखा जायेगा''

अर्थात् कयामत के दिन मनुष्य की कर्म कुण्डली, भले-बुरे, खरे-खोटे कर्मों का लेखा-जोखा ही देखा जायेगा। दुष्कर्मों के क्षमा होने का प्रश्न ही नहीं उठता। महाकवि अकबर ने ऋषि के स्वर में स्वर मिलाकर यह भी लिखा है- **''अज़ मास्त के बर मास्त''**

अर्थात् जो दुःख हम भोग रहे हैं- हमारी विपदा, सब हमारे किये का ही फल है। हिन्दू तो सब कुछ मानता है और कुछ भी नहीं मानता। आर्यो! संसार सुन रहा था। आपको क्या हो गया जो पाखण्ड-खण्डन छोड़ बैठे।

यह क्या लिख दिया- आर्यसमाज के बारे में विरोधी सभा-संस्थायें तो जानबूझकर थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल से कुछ न कुछ निराधार और भ्रामक बातें लिखती ही रहती हैं। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि आर्यसामाजिक पत्रों में भी जाने-अनजाने से कुछ न कुछ अनर्गल सामग्री छपती रहती है। महाराष्ट्र के लातूर नगर से प्रकाशित होने वाला 'लातूर समाचार' अच्छी सेवा कर रहा है। इसकी लोकप्रियता देखकर अब हर कोई अपने लेख की ज़ीरोक्स प्रति प्रकाशनार्थ वहाँ भेज देता है। अनुभवी सम्पादक कई बार बिना पढ़े ऐसे लेखों को छापने की भूल कर बैठते हैं। 'लातूर समाचार' के २-४-२०१८ के अंक में पृष्ठ ४ पर स्वामी श्रद्धानन्द जी पर प्रकाशित लेख के विषय में मुझसे एक गम्भीर प्रश्न पूछा गया है। समझ नहीं आता कि मैं प्रश्नकर्त्ता को क्या उत्तर दूँ? सम्पादक जी की धर्मभावना प्रशंसनीय है, परन्तु शीर्षक देखकर विश्वास करके लेख प्रकाशित करने की उनकी भूल के लिये उन्हें क्या लिखूँ?

''आर्य लोगो! आपने भी श्रद्धानन्द के इस हत्यारे से कुछ नहीं कहा और उसे बिना कुछ कहे छोड़ दिया।''

इसे सत्य समझें तो वीर धर्मसिंह तथा स्नातक धर्मपाल की हत्यारे को धर दबोचने की शौर्य गाथा और हत्यारे को फांसी से बचाने की मुसलमानों की कुचालों, फिर फांसी-दण्ड की घटना का सारा इतिहास क्या मिथ्या है?

लाला साईंदास की आँखों से आँसू छलकने आदि की कहानी भी आर्य भाई ध्यान से पढ़ें। जो लिखा है वह कहाँ तक सत्य है?

''मस्जिद के उस मीनार पर जा खड़ा हुआ।'' यह कथन कितना सत्य है? यह स्वामी जी के प्रथम जीवनी लेखक महाशय राजपाल जी तथा श्री स्वामी अनुभवानन्द जी को पढ़कर निर्णय कर लें। मीनार पर चढ़कर कहाँ भाषण दिया जाता है?

मेरा निवेदन इतना ही है कि बिना प्रमाणों के मिलान के, बिना जाँच-पड़ताल के कुछ मत लिखा जावे। ऐसा लेखन इतिहास-प्रदूषण के सिवा कुछ नहीं। विषय पर कुछ तो अधिकार हो।

योगी की पहचान- आज देश में एक महामारी बहुत फैल गई है। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को आप ही

महिमामण्डित किये जा रहा है। जिससे व्यक्ति व समाज दोनों का पतन हो रहा है। लोकैषणा और अहंकार-पूजा के कारण आत्मिक व नैतिक उन्नति हो ही नहीं सकी। देश में योग की दुहाई बहुत दी जा रही है। आर्यसमाज में स्वयं को योग-सिद्ध वृद्धों तो क्या युवा, योगाचार्यों की संख्या बढ़ती जा रही है। आर्यसमाज में कोई विरला वक्ता या लेखक होगा जो आचार्य नहीं कहाता होगा।

जब आचार्य नरदेव, आचार्य प्रियव्रत, आचार्य उदयवीर सरीखे पाँच-सात आचार्य थे तब आर्यसमाजी पत्रों में आर्यसमाज के विरुद्ध लिखे गये प्रत्येक लेख व पुस्तक का मुँहतोड़ उत्तर छपता रहता था और अब क्या किसी योगी ने कभी पौराणिकों, जैनियों, विधर्मियों का उत्तर दिया? अमरनाथ यात्रा, बद्रीनाथ यात्रा, वैष्णोदेवी यात्रा के नाम पर क्या-क्या होता है।

महात्मा हरिराम जी हमारे जाने-माने योगी थे। जब जम्मू कश्मीर में पौराणिक व मुसलमान दलितोद्धार के आर्यसमाज के आन्दोलन के विरोध में एक हो गये तब स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज सिर तली पर धरकर मैदान में कूदे तो महात्मा हरिराम जी उनके पीछे तन तानकर आग में कूद पड़े। ऋषि दयानन्द के पत्रों में योग समाधि घण्टों लगाता हूँ, ऐसी डींग नहीं मिलेगी। मैं उपासक हूँ, ईश्वर नहीं हूँ- यह तो कहा है। कई बाबा तो अपनी समाधि का ढोल पीटते ही हैं, नये-नये लड़के रजनीश के अश्लील समाधि-साहित्य को पढ़कर योग की दुकानें लगाये बैठे हैं। आर्यसमाज में पूर्वकाल में जैसे योगनिष्ठ महात्मा संघर्षशील थे, विरोधियों से टक्कर लेते रहे, उत्तर-प्रत्युत्तर देते रहे। ऐसे महानुभाव अब कहाँ हैं? ऋषि दयानन्द कार्यक्षेत्र में उतरने से लेकर देहत्याग तक संग्राम करते रहे। अबके योगी की पहचान है- शान्त, निष्क्रिय, मौन अपने डेरे में बैठे-बैठे प्रवचन देना। मौत के निकट पहुँचकर योगी रोते देश ने देखे। ऋषि ने कहा, मुझे तोप के सामने रखकर उड़ा दो, मैं तब भी पाषाण-पूजा का खण्डन ही करूँगा। ऐसे अटल ईशोपासक योगी संसार को चाहिये।

वह सहज खोज और भौतिक चिन्तन- राजा सर किशनप्रसाद हैदराबाद जब मुसलमान होने की सोच रहा था, तब हिन्दू यह जानकर उसे बचाने में स्वयं को असमर्थ व अयोग्य अनुभव कर रहे थे। तब पं. रामचन्द्र देहलवी जी से महाराजा की भेंट करवाई गई। संक्षिप्त प्रश्न-उत्तर में महाराजा के हृदय पर देहलवी जी ने वैदिक धर्म की छाप लगा दी। एक तर्क पुनर्जन्म के मत में देते हुये देहलवी जी ने सगर्व कहा, ''यह तर्क पं. लेखराम का है मेरा नहीं, कोई इसको काटकर दिखाये। कुरान का कथन अल्लाह बड़ा है, ठीक है, परन्तु वेद उसे सबसे बड़ा (ज्येष्ठ) मानता है। कुरान में तो अल्लाह से भी बड़ा एक है और वह है शैतान, जो आज तक खुदा की पकड़ में नहीं आया। ऐसी अनूठी युक्तियाँ अब कौन देता है?''

एक बार श्रीयुत् तपेन्द्र जी ने मुझे कहा, आपके पास बहुत कुछ है वह सब ज्ञान दे दो। आचार्य उदयवीर जी तथा पं. युधिष्ठिर जी की भी ऐसी ही प्रेरणा थी। जो कुछ मुझे याद है, मैं देने में, लुटाने में लगा हूँ। वर्तमान में बहुत हल्के, सस्ते विचार व वाक्य देखकर हमारे कथाकार ताली पिटवाना चाहते हैं, यथा तुम भले चाहे न बनो, पर बुरा भी किसी का मत करो। किसी को कुछ दे नहीं सकते तो किसी से कुछ छीनो मत।

स्वामी दर्शनानन्द विरोधियों को उत्तर देते हुये कहा करते थे कि यह कथन मिथ्या है कि गिनती एक से आरम्भ होती है। गिनती का भी न आदि है न अन्त। एक के नीचे १/२, १/३, १/४ कहीं तक चले जाओ। यह तर्क आज कौन देता है? आने में जाना व जाने में आना छिपा है। यह देहलवी जी का तर्क कौन देता है? शैतान ने पाप करवा दिया, ऐसा कहकर मुसलमानों ने शैतान को पाचनवटी बना दिया है। यह तर्क कौन देता है? मूर्ति में ईश्वर है, यह सत्य है, परन्तु उपासक आत्मा जिसे ईश्वर से मिलना है वह तो मूर्ति में व्यापक नहीं। भेंट तो वहीं होगी जहाँ परमात्मा व आत्मा दोनों हों। ऐसा स्थान तो हृदय ही है। यह तर्क कौन देता है? पादरी जोजेफ़ कुक सारे भारत को ईसाई बनाने की घोषणा करता फिरता था। ऋषि की हुंकार सुनकर सात समुद्र पार भाग खड़ा हुआ। पादरी नीलकण्ठ शास्त्री काशी, हरिद्वार और प्रयाग में लोगों को ईसाई बनाता रहा। पं. गंगाप्रसाद सनातनी ने लिखा है कि वह ऋषि दयानन्द का सामना न कर सका। यह इतिहास कौन सुनाता है?

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १७ से २४ जून, २०१८

(ज्येष्ठ शुक्ल ४ से ज्येष्ठ शुक्ल ११, सम्वत् २०७५ तक)

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे– समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा– खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

स्वामी विष्वङ्ग परिव्राजक
संयोजक

ओममुनि
मन्त्री

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टैण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

माता निर्माता भवति

कन्हैयालाल आर्य

अथर्ववेद का मन्त्र है-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवान्।।

(अथर्व. ३/३०/२)

हे गृहस्थियो! तुम्हारे घर में (**पुत्रः पितुः अनुव्रतः**) पुत्र पिता का अनुवर्ती, अनुकूल आचरण करने वाला हो-आज्ञाकारी हो और (**मात्रा भवतु सम्मनाः**), माता के समान मन वाला होवे, (**जाया पत्ये मधुमतीं शान्तिवान् वाचं वदतु**) पत्नी पति के लिए मधुमयी शान्ति देने वाली वाणी बोले।

मन्त्र के पूर्वार्द्ध के प्रथम चरण में तीन शब्द हैं जो बड़े महत्त्व के हैं और जिनसे कई प्रश्नों का समाधान हो जाता है। (अनुवतः पितुः पुत्रो) यहाँ पर पिता का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने पुत्र या पुत्री का भली-भाँति पालन-पोषण करे। इसको विद्या-सुशिक्षा से अलंकृत कर जगत् में अच्छा मानव बनाकर खड़ा करने का प्रयास करे। ऐसे ही यह जो पुत्र या पुत्री है, इसका यह कर्त्तव्य है कि वह अपने जनक-पिता को देव समझ कर इसका मान-सम्मान करे और इसके अनुकूल व्रतों का पालन करे, इसके अनुकूल आचरण करे। अर्थात् इसकी आज्ञाओं के अनुसार कार्य करे। ऐसा करने पर इस बालक का पिता प्रसन्न होगा और उसके हृदय से बच्चे के लिए आशीर्वाद निकलेगा।

मन्त्र के पूर्वार्द्ध के दूसरे चरण में तीन महत्त्वपूर्ण शब्द है (**मात्रा भवतु सम्मनाः**) अर्थात् यह पुत्र या पुत्री माता के समान मन वाला हो। यहाँ माता का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने इस पुत्र या पुत्री का भली-भाँति लालन-पालन करे। इसको जीवन के प्रभात से ही लोरियों के द्वारा वा छोटी-छोटी कहानियों के द्वारा विद्या-सुशिक्षा एवं उत्तमोत्तम गुण, कर्म, स्वभावों से युक्त करती हुई जगत् में एक अच्छे मानव के रूप में खड़ा करने का हार्दिक प्रयास करे। ऐसे ही यह जो सन्तान है, इसे चाहिए कि वह अपनी इस जननी को देवी समझकर इसका सम्मान करे और इसके साथ समान मन वाला, एक-मन वाला होकर सब कार्यों को करे। अर्थात् यह सदा यह सोचकर कार्य करे कि मेरे इस कार्य से माँ सुखी रहे? यह विचार करके जब यह कर्म करेगा तो फिर इसके द्वारा जो कर्म होगा, वह शुभ ही शुभ होगा और फिर उससे उसकी माँ की आत्मा सदा तृप्त रहेगी तथा हृदय से इसको आशीर्वाद देगी।

इस मन्त्र के उत्तरार्द्ध में वेद का उपदेश है, "**जाया पत्ये मधुमतीं शान्तिवान् वाचं वदतु**" पत्नी, पति के लिए माधुर्ययुक्त एवं शान्तिप्रद मधुर वाणी बोले। ऐसे ही पति भी पत्नी के साथ मधुर एवं प्रेम-युक्त भाषण करे। इस प्रकार तात्पर्य यह है कि दोनों का परस्पर व्यवहार बड़ा ही मधुर, प्रेममय और शान्तिपूर्ण ढंग से होना चाहिए, ताकि उनके इस माधुर्यपूर्ण व्यवहार का प्रभाव आने वाली सन्तान पर ऐसा अच्छा पड़े कि वह उन दोनों की आशाओं, आकांक्षाओं और विश्वासों से बढ़कर दिव्य बन सके, उत्तम बन सके।

इस मन्त्र के प्रथम चरण में जहाँ जनक के लिए 'पिता' तथा जननी के लिए 'माता' पद से स्मरण किया गया है और कहा गया है कि "**मात्रा भवतु सम्मनाः**" पुत्र माँ के समान मन वाला हो। अब जैसे 'पिता' शब्द से यह भली-भाँति बोध हो जाता है कि पिता का बालक के प्रति क्या कर्त्तव्य है। वैसे ही माता शब्द से ही यह ज्ञान होता है कि बालक के प्रति माता का क्या उत्तरदायित्व या कर्त्तव्य है। 'माता' का एक अर्थ (माङ्-माने धातु से यह शब्द बनने से) यह होता है कि जो मानकर्मी हो- मान करने वाली हो। अब पूरा विश्व यह जानता है कि माता अपने बच्चे का कितना मान करती है, उनकी भावनाओं और इच्छाओं पर वह क्या-क्या न्यौछावर कर देती है।

माता का दूसरा बड़ा सुन्दर अर्थ होता है 'माता निर्माता भवति' अर्थात् माता ही सन्तान का जैसा निर्माण कर सकती है दूसरा और कोई नहीं कर सकता। ऋषिवर दयानन्द जी भी सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय समुल्लास में लिखते हैं, "वह सन्तान भाग्यवान् है जिसके माता-पिता धार्मिक विद्वान् हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है, अन्य किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम और उनका हित करना चाहती है, उतना अन्य कोई नहीं करता। इसलिए माता को चाहिए कि वह बालक को सुशीलता का उपदेश करे। माता बालक की निर्मात्री होती है, उसमें सदा यह उत्कृष्ट अभिलाषा रहती है कि वह बच्चे के निर्माण में सदा सजग रहे। वेद के शब्दों में वह हृदय की टीस के साथ प्रभु से प्रार्थना करती है कि-

मम पुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट्

(ऋग्वेद १०/१५९/३)

अर्थात् मेरे पुत्र शत्रुओं का हनन करने वाले हों, मेरी पुत्री अद्वितीय तेज से युक्त हो। वह मात्र ऐसी प्रार्थना ही नहीं करेगी, वरन् जी-जान से ऐसा हार्दिक पुरुषार्थ भी करती है जिससे उसके पुत्र यदि ब्राह्मण बनें तो वे काम, क्रोध आदि भीतर के शत्रुओं का दमन करते हुए कपिल, कणाद, शंकर, दयानन्द, श्रद्धानन्द जैसे सच्चे योगी, तपस्वी, भक्त और वैदिक धर्म का प्रचार करने वाले हों। यदि वे क्षत्रिय हों तो युद्ध में शत्रुओं के छक्के छुड़ा देने वाले हों, शत्रुओं के दाँत खट्टे कर देने वाले एवं शत्रु पर पूर्णतया विजय प्राप्त करने वाले हों। यदि वे वैश्य बनें तो अपने अति लोभ पर विजय प्राप्त कर अत्यन्त पुरुषार्थ, अपनी तथा समाज की दैनिक आवश्यकताओं की आपूर्ति करने वाले हों और यदि वे सन्तान पढ़ाने से भी न पढ़ पायें तो तीनों वर्णों की उचित वृति लेकर सेवा करें। यदि पुत्री उत्पन्न हो तो वह ऐसी होनी चाहिए जैसे कि दोपहर के समय का तेजस्वी सूर्य होता है अर्थात् उसको कोई आँख उठाकर भी न देख सके और यदि कोई प्रयास करे तो सिंहनी के समान उसका मान-मर्दन करने वाली हो। इतना ही नहीं, वह माँ स्वयं तो ऐसा करती हुई कहती है-

उताहमास्मि सञ्जया, पत्यौ मे श्लोक उत्तमः

(ऋग्वेद १०/१५९/३)

मैं सम्यक् रूप से शत्रुओं की जीतने वाली होती हूँ। मेरे पति में भी उत्कृष्ट अंश होता है अर्थात् मेरे पति भी वीरता के कारण यशस्वी होते हैं। माता-पिता की वीरता के होने पर ही सन्तानों में भी वीरता आती है। माता-पिता का जीवन यशस्वी न हो, तो सन्तानों का जीवन कभी यशस्वी नहीं हो सकता अर्थात् वीर माता-पिता ही वीर व यशस्वी सन्तानों को जन्म देते हैं। माता वेद के शब्दों में अपने कर्त्तव्यों को घोषित करते हुए कहती है-

अहं केतुरहं मूर्धाहमुग्रा विवाचनी।
ममेदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचरेत्।।

(ऋग्वेद १०/१५९/२)

आदर्श माता कहती है कि (**अहं केतुः**) मैं ज्ञान वाली बनती हूँ। (**अहं मूर्धा**) मैं अपने क्षेत्र में शिखर पर पहुँचने का प्रयत्न करती हूँ। (**अहं उग्रा**) मैं तेजस्विनी बनती हूँ अर्थात् मैं अपने मस्तिष्क में ज्ञान, मन में शिखर पर पहुँचने की भावना वाली तथा शरीर में तेजवाली, प्रभु के नाम का सदा जप करने वाली आदर्श माता बनकर अपनी सन्तान का निर्माण करना चाहती हूँ। इसके अतिरिक्त वह माँ अपने पति से भी इस प्रकार का आश्वासन चाहती है। (**सेहानायाः**) काम, क्रोध आदि शत्रुओं का पराभव करने वाली (**मम**) मेरे (**क्रतुं अनु**) संकल्प के अनुसार (**इत**) ही (**पतिः**) मेरे पति (**उपाचरेत्**) कार्यों को करने वाले हों। अर्थात् यदि माता तेजस्विनी व शान्त स्वभाव वाली हो, क्रोध आदि से सदा दूर रहने वाली हो और उसके अनुसार उसका पति उसका सहयोग करने वाला हो तभी सन्तान का उत्तम निर्माण हो सकता है।

सच्ची माता अपने इन्हीं उत्तम गुणों के कारण से माता कहलाती है, न कि केवल दाल, शाक, भात, रोटी बनाकर खिला-पिला देने आदि मात्र से, क्योंकि यह कार्य तो पशु भी कर लेते हैं। मुख्य रूप से तो सन्तान का जन्म एवं निर्माण ही माता का कार्य है। इतिहास में यही कार्य माता जीजाबाई ने शिवाजी को बनाने में किया, माता कौशल्या ने भी श्रीराम जी को बनाने में किया, यशोदा ने श्रीकृष्ण जी को बनाने में किया। इन्हीं विशेषताओं के कारण से माता को शास्त्र ने 'देव' अर्थात् देवता की उपाधि दी है और पुत्र से कहा कि '**मातृदेवो भव**' तू प्रभु कृपा से उस माता को देवता समझकर उसकी पूजा अर्थात् सम्मान कर और उसकी इच्छानुसार अच्छे चरित्र का स्वामी बन।

महर्षि मनु जी ने (२/१४५) माता को उपाध्यायों, आचार्यों और यहाँ तक कि पिताओं से भी उत्कृष्ट स्थान पर खड़ा कर दिया। वे लिखते हैं-

उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्त्रं तु पितॄन् माता गौरवेणातिरिच्यते।।

(**दश उपाध्यायान् आचार्यः**) दस उपाध्यायों की अपेक्षा आचार्य का (**आचार्याणां-शतं पिता**) सौ आचार्यों की अपेक्षा पिता का (**तु**) और (**सहस्त्रं पितॄन् तु माता**) पिता से हजार गुणा माता (**गौरवेण अतिरिच्यते**) गौरव में अधिक है।

(यद्यपि डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी ने विशुद्ध मनुस्मृति में इस श्लोक को प्रसंग-विरोध और अन्तर्विरोध के कारण प्रक्षिप्त माना है, परन्तु माँ की महत्ता को दर्शाने में यह श्लोक महत्त्वपूर्ण है।)

वैदिक संस्कृति और सभ्यता में नारी को उच्च स्थान प्राप्त है, उसमें नारी के विभिन्न रूपों में उसकी महत्ता का वर्णन है, परन्तु नारी का माँ-रूप विशेष महत्त्व का है। वह समाज को एक योग्य सन्तति के रूप में अपना विशिष्ट योगदान प्रस्तुत करती है। ऐसी सन्तान एक सम्पुष्ट समाज के निर्माण में सहयोग करने वाली होती है। अतः यह कहना सत्य है-

माता निर्माता भवति।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

ऐतिहासिक कलम....

मानसिक स्वास्थ्य

आचार्य उदयवीर शास्त्री

लोक में बड़ी कहावत है- तन्दुरुस्ती बड़ी नियामत है। निस्सन्देह शरीर का स्वस्थ रहना हमारे जीवन को सुखमय बनाने का महत्त्वपूर्ण साधन है। सांसारिक सुखों के समस्त साधन संगृहीत रहने पर भी यदि मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, और वह उन अनायास प्राप्त साधनों को भोगने की क्षमता नहीं रखता, तो वे संगृहीत साधन भी उसके लिये नीरस हो जाते हैं, ऐसी स्थिति सुख देने के बजाय उस व्यक्ति के लिये दुखदायी हो जाती है, परन्तु इसके विपरीत एक स्वस्थ और परिश्रमी व्यक्ति अति परिमित बाह्य साधनों के साथ भी अपने-आपको सुखी समझता है या वास्तविक रूप में वह अधिक सुखी रहता है, क्योंकि वह अपने परिमित साधनों का ठीक उपयोग करने में समर्थ है। बूढ़े लोग कहा करते हैं, जो अपने काम आ-जाये वही अपना है, यह स्थिति सचमुच एक प्रकार की अनुकूल भावनाओं को जन्म देती है जिसका अनुपेक्षणीय सहयोग है हमारे स्वास्थ्य को टिकाये रखने में।

देखा जाता है कि शारीरिक स्वास्थ्य के लिये वैयक्तिक और सामूहिक रूप से भी अधिक सावधानी बरती जाती है, उसके लिए जगह-जगह सरकारी छोटे-बड़े अनेक चिकित्सालय, औषधालय स्थापित हैं, व्यक्तिगत व्यवसाय भी स्वास्थ्य सुधारने और रोग भगाने के नाम पर खूब चलता है। कहीं-कहीं व्यायामशालाओं और संघशालाओं के संचालन का भी आयोजन देखा जाता है, परन्तु मानसिक स्वास्थ्य के सम्पादन के लिए-विशेष तो क्या-साधारण प्रयत्न की ओर भी सरकारी या गैर सरकारी प्रवृत्तियाँ देखने में नहीं आतीं, यद्यपि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का चोली-दामन का साथ है। एक के ठीक होने से दूसरे का ठीक होना और एक के बिगड़ने से दूसरे का बिगड़ते जाना एक अनिवार्य परिस्थिति है। फिर भी मानसिक स्वास्थ्य को संवारे और बनाये रखने की ओर सर्वथा उपेक्षा-वृत्ति देखी जाती है। जब किसी मानसिक रोगी का रोग उभरकर पराकाष्ठा की परिस्थिति में पहुँच जाता है, तब उसे जनता पागल कहकर दुत्कारने लगती है और घृणा का पात्र समझने लगती है। सरकार ने भी इतने विशाल देश में ऐसे उत्कान्त मानस रोगियों के लिए दो-चार मानस-रोग-चिकित्सालय (मैन्टल हॉस्पिटल) संचालित कर रखे हैं, जहाँ किसी रोगी का पहुंचाया जाना भी एक मुहिम समझा जाता है। ऐसी उपेक्षित परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति को प्रयत्नपूर्वक अपने मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखना बड़ा आवश्यक है।

रोग के बीज और अंकुर- मानसिक स्वास्थ्य को ठीक बनाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि हम उन रोगों का पता लगायें और उनके कारणों को जानने का यत्न करें जो हमारे इस स्वास्थ्य के शत्रु हैं और अवसर पाकर बराबर हमला कर देने की ताक में दाँव लगाये बैठे रहते हैं। हमारा मनस्-जिसके स्वस्थ रहने के लिये हम प्रयत्नशील हैं-अथाह शक्तियों का भण्डार है, वह एक ऐसे खेत के समान है जो उर्वरा शक्ति से पूर्ण है। खेत में बीज बोने से पहले हम उसे साफ-सुथरा और उपयोगी बना लेते हैं। खेत की अपनी उर्वरा शक्ति के साथ जब बीज अंकुरित होता है, तो उसके साथ अनेक प्रकार के घास-पौधे उग आते हैं तो हमारे बोये बीज का अंकुर खेत में सिर उठाने में अशक्त होता है, रो देता है, म्लान होकर दम तोड़ जाता है, अगर रो-पीट कर किसी तरह बच गया तो अपने अन्त समय तक रोगी बना रहता है, इसलिए खेत के मालिक के लिए आवश्यक हो जाता है कि जैसे ही खेत में बीज अंकुरित हों, उनकी बराबरी करते हुए जो घास-पौधे सिर उठाते हैं, उन्हें मौका पा यत्नपूर्वक जड़ से उखाड़ दिया जाय, बस खेत में जीवन आ जायगा, उसकी श्यामल आभा देखते ही बनेगी।

अपने जीवन को सुखमय बनाये रखने के लिए जैसे हर प्रकार के स्वास्थ्य को ठीक रखना आवश्यक है, इसी प्रकार स्वास्थ्य को, विशेष रूप से मानसिक स्वास्थ्य को सुसम्पन्न बनाये रखने के लिये आवश्यक है कि हम अपने मानस रूपी खेत में किसी प्रकार के, अनपेक्षित चिन्ता, भय, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, आदि-आदि घास-पौधों को अंकुरित न होने दें, यदि ये अवसर पा कर कभी सिर उठाने लगते हैं तो यत्नपूर्वक इन्हें बहला लेना चाहिये, जिससे ये शत्रु बनकर सामने न आयें। यत्नपूर्वक बहलाने का यही अभिप्राय है कि कोई भी ऐसा

भाव प्रकट होने पर यह विचार करना उचित है कि ऐसी भावनाओं के उभरने का कारण क्या हुआ है, उन कारणों की तह और उनके हटाने के ऐसे उपायों पर विचार करना अपेक्षित होगा, जो अपने को हानि न पहुँचाते हुए उन भाव-शत्रुओं को हटाने में समर्थ हों। यद्यपि उग्ररूप में उन भावनाओं (चिन्ता, भय आदि) के उभरने पर मानस क्षेत्र में ऐसा तूफान आ जाता है कि उसके रहते कोई भी ऐसे विचार सामने आने का साहस नहीं करते, जो उस तूफान को अन्तर्हित करने में सहयोग दे सकें और साधारण रूप से इसी स्थिति को उचित व उपयुक्त समझा जाता है। पर इस दिशा में थोड़ा अभ्यास करने पर निश्चित रूप से हम सफलता का आलिंगन कर सकते हैं। एक बार स्वस्थ अवस्था में गहराई के साथ यह समझ लेने की आवश्यकता होती है कि ये हमारे आन्तरिक शत्रु हैं अपने मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाने के लिये। इस प्रकार की भावना के बद्धमूल हो जाने पर इनको सफलता के साथ बहलाये जाने में फिर कोई विशेष बाधा आने की संभावना नहीं रहती।

चार विभाग- आरोग्य अथवा चिकित्सा-शास्त्र में इस परिस्थिति को चार भागों में विभक्त किया है-रोग, रोग-हेतु, आरोग्य (रोग-नाश की अवस्था) और आरोग्य के उपाय। नियमानुसार अब मानसिक स्वास्थ्य के लिये मानस रोग और उनके कारणों को समझना आवश्यक हो जाता है, अन्यथा हम उनके नाश और नाश के उपायों की ओर प्रवृत्त ही न हो सकेंगे। मानसी व्यथा या कष्ट ही मन के रोग हैं। मानस कष्ट, शास्त्रकारों ने भय, चिन्ता, ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, मोह, विषाद आदि बताये हैं और उस स्थिति का प्रतिकूल प्रभाव शरीर के अन्य अंगों पर न्यूनाधिक अवश्य पड़ता है। चिन्ता, भय आदि भाव किन कारणों से उभर आते हैं, यह देखना आवश्यक है। वस्तुस्थिति यह है कि इनके उभार का कोई एक कारण नहीं होता, परिस्थिति और वातावरण के अनुसार कारण अनेक प्रकार के हो जाते हैं। हमें कारणों की विभिन्नता पर विचार करने की इतनी आवश्यकता नहीं, जितनी उभरती हुई उन भावनाओं की है। चिन्ता आदि की भावना को उभरते ही तत्काल पकड़ने की आवश्यकता है और जो कोई परिस्थिति या आवरण वहाँ कारण बनकर उपस्थित हो, उसकी सर्वात्मना उपेक्षा करने के अभ्यास में प्रयत्नशील रहना आवश्यक है, तब हम उस उभरते हुए मानस रोग को शान्त करने में सफल हो जाते हैं।

कोई भी व्यक्ति मानसिक रूप में स्वस्थ है, इस बात को निम्नलिखित कसौटियों पर परखा जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति में ये गुण पाये जाते हैं तो समझ लेना चाहिये कि वह मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से ठीक है-

१. वह अपने किन्हीं भी निजी कार्यों के करने में लज्जा अथवा भय का अनुभव नहीं करता। वह यह नहीं महसूस करता कि ऐसा करने से लोग मुझे छोटा या बड़ा कहेंगे या क्या कहेंगे, यद्यपि वह कार्य सामाजिक दृष्टि से आवश्यक कर्त्तव्य माना जाता है।

२. वह अपने विभिन्न गुणों के समन्वय करने की क्षमता रखता है। अभिप्राय यह है कि विरोधी या प्रतिकूल भावनाओं के उभर आने पर वह उनके वश में नहीं हो जाता, प्रत्युत उन पर अपना अधिकार रखता है और अपने भविष्य की भलाई के लिए तात्कालिक विषय-सुखों के परित्याग की क्षमता रखता है।

३. अपनी सीमित सम्पत्ति पर उसे संतोष है, वह अपने कार्यों की सफलता तथा अपनी क्षमताओं पर अभिमान प्रकट करने का प्रयत्न नहीं करता और न असफलताओं पर पश्चात्ताप करता है।

४. जिन परिस्थितियों में उसे रहना पड़ जाय, वहाँ वह ऐसे ही रहना प्रारम्भ कर देता है जैसे सदा से वहीं रहने का अभ्यस्त हो। अभिप्राय यह है कि कैसी भी परिस्थिति आने पर न अपने-आप को विचलित होने देता और न अपने पड़ोसियों को विक्षुब्ध करता है। वह अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं ढूंढ लेने में समर्थ रहता है।

५. अपने विषय में किसी ज्योतिषी या भविष्यवक्ता से पूछने की अपेक्षा नहीं रखता कि उसके विषय में क्या होने को है या उसका भविष्य कैसा है। वह यह भी पूछने की आवश्यकता नहीं रखता कि अपने सम्बन्धी कार्यों में उसे क्या करना चाहिये या क्या नहीं करना चाहिये।

६. वह सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूल-प्रतिकूल अवस्थाओं में अपने-आपको समान भाव से कर्मठ बनाये रखता है।

ये कुछ कसौटियाँ हैं जिन पर मानसिक स्वास्थ्य को परखा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति जरा गम्भीरता से विचार करने पर यह अच्छी तरह समझ सकता है कि वह इस दृष्टि

से रोगी है अथवा नीरोग है। उसके अनुसार आचरण एवं कर्त्तव्य-पालन से अपने-आपको ठीक स्थिति में रख सकता है।

स्वास्थ्य के उपाय- यदि रोग ने हमको दबाया है, तो निम्नलिखित उपायों के प्रयोग से अपने परिश्रम के अनुसार हम किसी-न-किसी सीमा तक रोग से छुटकारा पा सकते हैं। यदि रोग ने दबाया नहीं है तो इन उपायों का निरन्तर आसेवन हमें इस योग्य बना दे सकता है कि हमारे मनस् में वे रोग सिर न उठा सकें।

१. सबसे पहला उपाय है- संतुलित भोजन। यह अभी स्पष्ट किया गया है कि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। एक के बिगड़ने से दूसरे का बिगड़ना और एक के सुधरने से दूसरे का सुधरना आवश्यक है। संतुलित भोजन दोनों प्रकार के स्वास्थ्य पर अपना अनुकूल प्रभाव रखता है। भोजन के संतुलन में तीन बातों का ध्यान आवश्यक रूप से रखना चाहिये।

(क) भोजन अपनी प्रकृति के अनुकूल हो। यह प्रत्येक व्यक्ति समझता है कि मुझे किस वस्तु के प्रयोग से कष्ट या रोग हो जाता है, उसका प्रयोग न करना चाहिये। इस विषय में अपने विश्वस्त चिकित्सक की आवश्यकता पड़ने पर सहायता ली जा सकती है।

(ख) भोजन में जिन वस्तुओं का प्रयोग किया जा रहा है, वे खाद्य वस्तु परस्पर प्रतिकूल प्रतिक्रियाओं को उत्पन्न करने वाली नहीं होनी चाहियें। जैसे खरबूजे के साथ दूध पीना और आमों के साथ शर्बत या दही, इसी तरह फूट के साथ दही इत्यादि। इस प्रकार के भोजन के सामञ्जस्य या असामञ्जस्य को प्रायः सब लोग जानते हैं। घरों में महिलाएँ भी इन बातों को जानती-समझती हैं। आवश्यकता होने पर इस विषय में भी विशेषज्ञ चिकित्सक या अनुभवी की अनुमति का उपयोग किया जा सकता है।

(ग) भोजन के सन्तुलन में तीसरी बात बड़ी आवश्यक है और कुछ कठिन भी, वह है-आवश्यकता से अधिक बिल्कुल न खाना। यह बात सर्वात्मना अपने ऊपर निर्भर करती है, इसमें न किसी चिकित्सक की अनुमति अपेक्षित है, न किसी अन्य अनुभवी की। कुछ भी स्वादु या रुचिकर भोजन होने पर व्यक्ति साधारण रूप में आवश्यकता से अधिक खा जाता है। यह स्वास्थ्य को हानिकर है। थोड़े ही अभ्यास से प्रत्येक व्यक्ति को अन्दाज़ हो जाता है कि मेरे लिये कितना आहार अपेक्षित है। स्वादु से स्वादु, अति रुचिकर खाद्य होने पर भी अधिक की ओर जाती हुई अपनी प्रवृत्ति को बुद्धिमत्तापूर्वक नियन्त्रित करना चाहिये। साधारणरूप से इसमें यह पहचान सहायक हो सकती है कि हमें भोजन में थोड़ी रुचि रहते अपना भोजन समाप्त कर लेना चाहिये, अरुचि उत्पन्न होने तक न खाते रहना चाहिये।

मानसिक स्वास्थ्य के लिए अगली बात है आपके कार्य की। जीवन-निर्वाह के लिये जो आप कार्य करते हैं, वह आपकी रुचि के अनुसार होना चाहिये। इससे सदा मन की अनुकूलता बनी रहती है, उस कारण से रोगोत्पत्ति का अवसर नहीं रहता।

३. अन्य भी ऐसे कार्यों में प्रवृत्ति रखिये, जो समाज में विशृंखलता उत्पन्न न करते हुए आपके मनोनुकूल हों। मनोरंजन का ध्यान आवश्यक रूप में रखना चाहिये।

४. आप जो भी कार्य करते हैं, उसमें हीन भावना नहीं आनी चाहिये, प्रत्युत गर्व का अनुभव होना चाहिये।

५. अपने मस्तिष्क और बाह्य इन्द्रियों को आवश्यकतानुसार पर्याप्त विश्राम दीजिये।

६. साधारण वार्त्तालाप में कभी गंभीर न बनें, हास-परिहास का स्वभाव बनाने का प्रयत्न कीजिये, पर मर्यादा को कभी न छोड़िये।

७. बड़ों का सदा आदर करिये, इससे मन को बल मिलता है, और झिझक (संकोच की भावना) दूर होती है।

८. क्रोध की भावना से सदा बचे रहिये, यह विनाश का कारण होता है और मन के सन्तुलन को सहसा उखाड़ फेंकता है।

९. अपने ज्ञान और अनुभव को बढ़ाते रहने के लिये सदा प्रयत्नशील रहिये। अच्छी बात सीखने में किसी से संकोच न कीजिये।

१०. अपने ज्ञान या बल पर मिथ्या अभिमान कभी न कीजिये, इससे अनेक मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं, विनय को कभी अपने हाथ से न जाने दीजिए।

इन उपायों का प्रयोग करने पर निश्चित ही मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाया जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक उपाय का प्रयोग बलपूर्वक हो, आपकी सुविधा पर निर्भर है, उसके अनुसार आपको स्वास्थ्य लाभ होगा।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. वेदपथ के पथिक (आचार्य धर्मवीर स्मृति ग्रन्थ)

पृष्ठ संख्या-२६४

मूल्य-रु. २००/-(आधे मूल्य पर उपलब्ध)

परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का जीवन सत्य के लिये संघर्षपूर्ण रहा है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने ईश्वर, वेद और धर्म को अपने जीवन से तनिक भी अलग नहीं होने दिया और यही विशेषता रही, जिसके कारण वे एक आदर्श आचार्य, आदर्श नेता, आदर्श लेखक, आदर्श सम्पादक एवं आदर्श उपदेशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके जीवन की कही-अनकही घटनाएँ हमें भी प्रेरणा दें, इस दृष्टि से ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय है। जिन्होंने डॉ. धर्मवीर जी को निकट से देखा है, जो उनके जीवन की घटनाओं के साक्षी रहे हैं, उनके संस्मरण इस कर्मयोगी के जीवन की बारीकियों को उजागर करते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में चित्रों के माध्यम से भी उनके जीवन की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र-

पृष्ठ संख्या-३३६ **मूल्य**-रु. २००/-

महर्षि दयानन्द, उनके उद्देश्यों, कार्यों, योजनाओं एवं व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा लिखे पत्र उतने ही उपयोगी हैं, जितना कि उनका जीवन-चरित्र। ये पत्र महर्षि के हस्तलिखित हैं। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें मूल-पत्रों की प्रतिलिपि दी गई है और साथ ही वह पत्र टाइप करके भी दिया गया है। यह पुस्तक विद्वानों के दीर्घकालीन पुरुषार्थ का फल है। जनसामान्य इससे लाभ ले-यही आशा है।

३. अंग्रेज जीत रहा है-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-२२२ **मूल्य**-रु. १५०/-

इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के 'भाषा और शिक्षा' विषय पर लिखे गये ४२ सम्पादकीयों का संकलन किया गया है। 'परोपकारी' पत्रिका में लिखे गये इन सम्पादकीयों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की माँग समय-समय पर उठती रही है। अत: पुस्तक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। डॉ. धर्मवीर जी का चिन्तन बेजोड़ था। वे जिस विषय पर जो भी लिखते वह अद्वितीय हो जाता था। उनके अन्य सम्पादकीयों का प्रकाशन भी प्रक्रिया में है। पुस्तक का आवरण व साज-सज्जा अत्याकर्षक है।

४. स्तुता मया वरदा वेदमाता-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१३५ **मूल्य**-रु. १००/-

वेद ईश्वर प्रदत्त आचार संहिता है। वेद की आज्ञा ईश्वर की आज्ञा है और वही धर्म है, इसलिये मानव मात्र की समस्त समस्याओं का समाधान वेद में होना ही चाहिये। वेद के कुछ ऐसे ही सूक्तों की सरल सुबोध व्याख्या ही इस पुस्तक में की गई है। पुस्तक की भाषा इतनी सरल है कि नये-से नये पाठक को भी सहज ही आकर्षित कर लेती है। व्याख्याता लेखक आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के गहन आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक चिन्तन व अनुभवों के परिणामरूप यह पुस्तक है।

५. इतिहास बोल पड़ा–

लेखक – प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

पृष्ठ संख्या–१५९ **मूल्य**–रु. १००/–

इस पुस्तक में इतिहास की परतों से कुछ दुर्लभ तथ्य निकालकर दिये गये हैं, जो कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरव का बखान करते हैं। पुस्तक के लेखक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु हैं। ऋषि के समय में देश–विदेश से छपने वाले पत्र–पत्रिकाओं के उद्धरण इस पुस्तक में दिये गये हैं।

६. बेताल फिर डाल पर

लेखक – प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या–१०४ **मूल्य**–रु. ६०/–

डॉ. धर्मवीर जी की हॉलैण्ड एवं अमेरिका यात्रा का विवरण एवं अनुभव इस पुस्तक में है। विदेश में आर्यसमाज की स्थिति, कार्यशैली, वहाँ की परिस्थितियाँ एवं विशेषताओं को यह पुस्तक उजागर करती है। यायावर प्रवृत्ति के विद्वान् आचार्य धर्मवीर जी की यह पुस्तक एक प्रचारक के जीवन पर भी प्रकाश डालती है।

७. लोकोत्तर धर्मवीर–

लेखक – तपेन्द्र वेदालंकार,

पृष्ठ संख्या–४४ **मूल्य**–रु. २०/–

तपेन्द्र वेदालंकार (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.) ने इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के जीवन की कुछ ऐसी घटनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनसे धर्मवीर जी के महान् लक्ष्यों व तदनुरूप कार्यशैली का पता चलता है। इस लघु पुस्तक से प्रेरणा लेकर प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के उद्देश्यों को पूर्ण करने में उत्साहित हो–यही आशा है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम – **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम – **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या – **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

अतिथि–यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि–यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

मनः सत्येन शुध्यति

तपेन्द्र वेदालंकार आई.ए.एस. (से. नि.)

हमारे ऋषियों ने बताया था कि मन सत्य से शुद्ध होता है, परन्तु हम दुकान पर बैठकर असत्य व्यवहार में नहीं हिचकिचाते, पद-प्रतिष्ठा के लिए असत्य का सहारा लेने को बुरा मानना छोड़ बैठे। जीवन-व्यापार असत्य के बिना नहीं चलता- इसको सिद्धान्त की तरह मानने लगे। **मनः सत्येन शुध्यति** को जानते हुए भी हमने मानना छोड़ दिया। पूजा को क्रिया की तरह मानकर दिन भर मनमानी करते देखे जाते हैं। ''जैसा ज्ञान में हो वैसा ही सत्य बोले, करे और माने'' महर्षि दयानन्द जी महाराज की सत्य की व्याख्या को एक ओर उठा के रख दिया। क्या बोलने, क्या करने, क्या मानने से कौन नाराज होगा, कौन खुश होगा, क्या लाभ होगा, क्या हानि होगी-यह बोलने, करने और मानने का पैमाना बन गया।

आर्यसमाज के नियमों में-सत्य विद्या, सत्यविद्याओं का पुस्तक, सत्य का ग्रहण, असत्य का छोड़ना, सब काम सत्य और असत्य को विचार करके करना-सीधे-सीधे सत्य का उल्लेख महर्षि ने किया है। हमें गुरुकुल में आर्यसमाज के नियम स्मरण कराये जाते थे। आज अधिकांश में तो आर्ष पाठ्यक्रम है ही नहीं, जहाँ है वहाँ महर्षि का साहित्य नाम-मात्र पढ़ाया जाता है। एक गुरुकुल के ब्रह्मचारी से मैंने आर्यसमाज का दूसरा नियम पूछा, नहीं बता पाया। **अरे! बिना मूल के पेड़ कैसे खड़ा होगा?**

महर्षि सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं, '**सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः**' सर्वदा सत्य की विजय और असत्य की पराजय और सत्य ही से विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। व्यक्ति अपने चिन्तन, अपने दर्शन, अपने विचार अनुसार जिसे हितकारी समझता है वही कार्य करता है, परन्तु हितकारी की परिभाषा में हमने सांसारिक हित का ही समावेश कर लिया है, परलोक की बात छोड़ दी, कर्म-सिद्धान्त भूल गये। बुरे का बुरा फल मिलेगा-यह विस्मृत कर दिया। ईश्वर कण-कण में व्याप्त है, हमारे मन में भी है, वह सब जान रहा है, उसके न्याय से कोई बच नहीं सकता-इसको बिसरा दिया।

जब मन स्वच्छ होगा, पवित्र होगा, सत्य-असत्य को जानकर सही मार्ग का अनुसरण करेगा तो जीवन जीने का ढंग ही बदल जायेगा। हमारी दिनचर्या, रहन-सहन, खान-पान, व्यवहार, वार्तालाप, वेशभूषा, सब बदल जायेंगे-सात्त्विक हो जायेंगे। आज मन को शुद्ध करने की महती आवश्यकता है। फलतः सत्य को व्यवहार में अपनाने की भी उतनी ही जरूरत है। मैं ९० के दशक में एक जिले में जिलाधीश था। मेरे पास आर्यसमाज के कुछ पदाधिकारी आये। यज्ञ में मुझे आमन्त्रित किया। मैं गया। देखा तो ६०-७० साल के बूढ़े-बूढ़े तक रंगीन पैंट व कमीजें पहने हवन में बैठे हैं। मैं अकेला ही धोती-कुर्ते में था। फिर हमारी क्या पहचान रही? क्या अपने विशेष अवसरों पर विशेषतः यज्ञों व उत्सवों में उचित परिधान धारण नहीं किया जा सकता?

महर्षि सत्यार्थप्रकाश में पञ्चम समुल्लास में लिखते हैं, ''इसलिए विद्या पढ़ने, सुशिक्षा लेने और बलवान होने आदि के लिए ब्रह्मचर्य, सब प्रकार के उत्तम व्यवहार सिद्ध करने के अर्थ गृहस्थ; विचार, ध्यान और ज्ञान बढ़ाने तथा तपश्चर्या करने के लिए वानप्रस्थ; सत्यशास्त्रों का प्रचार, धर्म-व्यवहार का ग्रहण और दुष्ट-व्यवहार के त्याग, सत्योपदेश और सबको निःसन्देह करने आदि के लिए संन्यास आश्रम है।''

आज ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्या पढ़ी नहीं जा रही, सुशिक्षा ली नहीं जा रही, हाँ शिक्षा पढ़ी जा रही है केवल। जो जिसके लिए परिश्रम करता है, वही प्राप्त होगा, उससे अलग तो प्राप्ति होगी नहीं। शिक्षा पढ़ी अर्थ के लिए, नौकरी के लिए, व्यवसाय के लिए, तो वह मिल जावेगा। पर महर्षि ने जो विद्या पढ़ने की बात कही थी-वह तो मानी नहीं। फलतः आज की पीढ़ी की न तो दिनचर्या है, न खान-पान है, दिन चढ़े सोकर उठती है, रात को देर तक नेट करते-करते सोती है, व्यायाम का पता नहीं, अब कुछ हाथ-पैर बनाने के लिए जिम जाते हैं तो उनको उसका उद्देश्य पता नहीं। फैशन तो सब दिखायी पड़ ही रहा है,

जिसे देख नहीं सकते। कहीं चर्चा है तो फिल्मों की, कहीं बहस है तो फैशन की, एक्टर-एक्ट्रेस ने किस फिल्म में क्या पहना, ज्ञानवर्धन यहाँ तक ही सिमट कर रह गया। बिना विद्या के आने वाले समय में विनाश के बीज तो बोये गये।

सरकारों के शिक्षा विभागों से तो कोई आशा करना व्यर्थ है कि वे आने वाली सन्तति को विद्या का ज्ञान करा देंगे, इसलिए जिम्मेदारी आर्यों को ही लेनी होगी। अपनी सन्तान को सत्य, विद्या आदि शुभगुणों से युक्त करने का कार्य परिवार को करना होगा। यह कहने से नहीं होगा बल्कि हमारे स्वयं के व्यवहार में सत्यता व धर्म पालन कितना है? उससे होगा।

उत्तम व्यवहार सिद्ध करने के लिए गृहस्थ था, जो धर्मानुसार हो, जो सत्य-असत्य को विचार करके किया जावे, जिससे शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक उन्नति हो-वही तो उत्तम कहलायेगा। धर्म केवल आलंकारिक वस्तु नहीं अपितु सिद्धान्तों को जीवन में उतारना है, व्यवहार में लाना है। आत्म-चिन्तन किया जा सकता है कि धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य व अक्रोध-इन दश धर्म के लक्षणों में से किस-किस का कितना-कितना पालन कर रहे हैं? कहीं ऐसा तो नहीं कि अधिकांश के जीवन में इन बातों के लिए स्थान ही न बन पाया हो और हम परम्परा से व समाज-भय से ही कुछ लक्षणों की पालना कर लेते हों, परन्तु क्या बिना विचारधारा दृढ़ हुए यह परम्परा चल टिक सकेगी?

महर्षि ने कहा है, ''**प्रथम**, वेदादि शास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना, सन्ध्योपासन, योगाभ्यास, **दूसरा**-देवयज्ञ, विद्वानों का संग, सेवा, पवित्रता, दिव्य गुण का धारण, दातृत्व, विद्या की उन्नति करना है। ये दोनों यज्ञ प्रातः, सायं करना होता है।'' भूमिका में लिखते हैं, ''प्रातः काल व सायंकाल में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना सब मनुष्यों को करनी चाहिये। '' **स साधुभिर्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विज कर्मणः**-मनु के श्लोक का भी उल्लेख किया है। यज्ञ के बारे में महर्षि सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं, ''प्रातः काल व सायंकाल अथवा प्रातःकाल ही नित्य होम करे।'' ''इस कारण अग्निहोत्र करने वाले मनुष्यों को उस उपकार से अत्यन्त सुख प्राप्त होता है और ईश्वर उन पर अनुग्रह करता है।'' तृतीय समुल्लास में तो यज्ञ नहीं करने को महर्षि पाप बताते हैं। अब हम देख लें कि हममें से कितने पाप नहीं कर रहे? कितने ईश्वर का अनुग्रह प्राप्त कर रहे हैं? आर्यसमाजों में जहाँ प्रतिदिन यज्ञ होता है, वहाँ कुछ वृद्ध श्रद्धालु बैठकर ही यज्ञ करते देखे जाते हैं। प्रतिदिन यज्ञ करने वालों की संख्या तो बहुत ही कम है। प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ करने वाले तो नगण्य हैं।

महर्षि ने कम से कम दो घण्टे प्रतिदिन प्रातः-सायं उपासना करने का विधान किया है, परन्तु हम तो सन्ध्या भी एक्सप्रेस गाड़ी की गति से करते हैं। एक सज्जन से मैंने पूछा-उपासना हो रही है? बोले, सन्ध्या करता हूँ। मैंने कहा, सबसे वैज्ञानिक उपासना है सन्ध्या। कुछ प्रगति? बोले एक मिनट भी मन नहीं ठहरता, परन्तु कर तो रहे हैं। अन्यथा कितने लोग सन्ध्या कर पाते हैं? करें तो तब जब घर गृहस्थ से फुरसत मिले। सन्ध्या प्रत्येक आर्य को करनी चाहिये, परन्तु क्या व्यावहारिक जीवन में इसकी सचमुच पालना हो रही है? उत्सवों में लोग यज्ञ के समय इधर-उधर गप्पें लगाते मिल जाते हैं तथा सन्ध्या-समय सन्ध्या करते नहीं देखे जाते। **कृण्वन्तो विश्वमार्यम् होगा कैसे?** जब हम स्वयं पालना नहीं करेंगे, स्वयं आर्य नहीं बनेंगे।

महर्षि लिखते हैं कि वर्ण-व्यवस्था गुण कर्म के अधीन होनी चाहिये। ''...जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुण कर्म स्वभाव वाला होवे तो उसको भी उत्तम वर्ण में और उत्तम वर्णस्थ होके नीच कर्म करे तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिये।'' सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में '**शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्**' का अर्थ करते हुए लिखते हैं, ''जो शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के सदृश गुण कर्म स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाये।'' परन्तु आज भी कुछ लोग सरनेम पूछते नजर आते हैं, सीधी जाति नहीं पूछी, सरनेम पूछ लिया, पूरा नाम क्या लिखते हैं, पूछ लिया। आर्यसमाज के एक पदाधिकारी मेरे पास आये, मुझे समाज में निमन्त्रित करने। बोले, हम जाति-पाँति नहीं मानते, हम तो अमुक के उत्सव में भी गये थे जबकि वह चमार है।

आर्यसमाजी हो गया, विद्वान् हो गया, उपदेशक हो गया अरे! फिर चमार कैसे रह गया?

विचार, ध्यान और ज्ञान बढ़ाने के लिए वानप्रस्थ आश्रम था। कितने विचार, ध्यान और ज्ञान बढ़ा रहे हैं और कितने तपश्चर्या कर रहे हैं? सेवानिवृत्त पार्कों में हाउजी खेलकर समय काट रहे हैं। सीनियर सिटिजन ताश खेल कर प्रसन्न हो रहे हैं, दुकान पर बैठ कर व्यवसाय कर रहे हैं, किसी पद पर जाकर सांसारिक प्रतिष्ठा पा रहे हैं, नहीं तो घर में बैठकर घरवालों पर बोझ बन चुके हैं, घर में तनाव बढ़ा रहे हैं, या अपमानित हो रहे हैं। न तो विचार बदले, न ज्ञान बढ़ाने का प्रयत्न हुआ, ध्यान व तपस्या की तो बात ही क्या? साठ-सत्तर वर्ष अपने घर में हुक्म चलाया, आज भी घर को खुद ही चलाना चाहते हैं। आज सन्तानें बड़ी हो गयीं, हम फिर भी बड़े नहीं हुए।

अरे! महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है, ''मनुष्यों को उचित है कि ब्रह्मचर्याश्रम समाप्त करके गृहस्थ, गृहस्थ होकर वानप्रस्थ और वानप्रस्थ होकर संन्यासी होवे अर्थात् यह अनुक्रम से आश्रम का विधान है।''

एवं गृहाश्रमे स्थित्वा विधिवत्स्नातको द्विजः।
वने वसेत्तु नियतो यथावत् विजितेन्द्रियः।। मनु.

''इस प्रकार स्नातक अर्थात् ब्रह्मचर्यपूर्वक गृहाश्रम का कर्त्ता द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य गृहाश्रम में ठहर कर निश्चितात्मा और यथावत् इन्द्रियों को जीत कर वन में बसे। परन्तु हममें से कितने ऐसे द्विज हैं जिन्होंने वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश किया है? हमारे तो विद्वानों ने भी वानप्रस्थ को भुला दिया। यदि नहीं भुलाया होता तो वानप्रस्थियों की लाइन लगी होती-पर ऐसा नहीं है, न घर में दिखता, न आश्रमों में दिखाई पड़ता। वानप्रस्थ और संन्यास की आयु में लोग विवाह की वर्षगाँठ मनाते दिखाई दे रहे हैं। ऋषि के आदेश को माने बिना हम ऋषि के अनुयायी कैसे कहला सकते हैं?''

मन को सत्य से शुद्ध करना होगा, अपना आचरण पवित्र करना होगा। अपने आदर्श से अपनी आने वाली पीढ़ी को संस्कार देने होंगे। गृहस्थ में रहकर सन्ध्या, यज्ञ, स्वाध्याय करना होगा। वानप्रस्थ की दीक्षा लेकर अपने परिवार के दायरे से निकल कर सब परिवारों को अपना मानने का अभ्यास करना होगा। संन्यास की तो बात ही क्या करनी? मैंने स्वामी केवलानन्द जी महाराज से निवेदन किया कि मुझे सीधे ही संन्यास दे दें। बोले, नहीं, तुम्हारी योग्यता नहीं, संन्यास के लिए सम्प्रज्ञात समाधि तक पहुँचना जरूरी है, साधना करो, उसके बाद सोचना। अब तो सुना है थोक में संन्यासी बनाये जा रहे हैं।

महर्षि कहते हैं जब पूर्ण वैराग्य हो जावे तो संन्यास लेकर परोपकार करे। वैराग्य की परिभाषा योगदर्शन में दी है-नेत्रादि इन्द्रियों से साक्षात् किये हुए विषयों से और वेदादि शास्त्रों में पढ़े, आचार्यों से सुने गये विषयों से-चित्त का वासनारहित हो जाना, आसक्तिरहित हो जाना वैराग्य है, परन्तु आज अधिकांश संन्यासी आश्रमों की व्यवस्था व गुरुकुलों के संचालन में ही व्यस्त होकर रह गये या फिर राजनीति को लक्ष्य बना लिया। ये अच्छी बातें हैं, परन्तु इन्हें तो गृहस्थी व वानप्रस्थी भी ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं, केवल इनके लिए संन्यास की क्या आवश्यकता? इसमें वैराग्य कहाँ दिख रहा है? आज दूसरे सम्प्रदायों में गुरुओं व संन्यासियों की बाढ़ है पर उनमें से कइयों के बारे में तो सर्वविदित है ही, परन्तु क्या आज आर्यसमाज में भी वैरागी संन्यासियों के दर्शन दुर्लभ नहीं हो रहे?

कोई निराश होने की बात नहीं, अच्छे विद्यार्थी, अच्छे गृहस्थी, अच्छे वानप्रस्थी, अच्छे संन्यासी आर्यसमाज में हैं, पर क्या उन्हीं के थोड़े से कन्धों पर कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का बोझ पड़ा रहेगा? संसार को आर्य बनाना है, श्रेष्ठ बनाना है तो उसी के अनुपात में आर्यों का, श्रेष्ठों का संख्या बल बढ़ाना होगा, साथ ही साथ गुणवत्ता भी बढ़ानी होगी। यह स्वयं के सत्य व्यवहार से प्रारम्भ होगा, परिवार से बढ़ेगा, समाज में फैलेगा।

ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है, वैसे ही राजा को भी चाहिये कि प्रजा को अपनी न्याय-व्यवस्था से सुख देवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३९

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१५ से ३० अप्रैल २०१८ तक)

१. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर २. श्री त्रिभुवनप्रकाश अग्रवाल, गाजियाबाद ३. श्री सुमन कुमार आर्य, खगड़िया ४. डॉ. प्रहलाद ठक्कर, अहमदाबाद ५. श्री सूर्यप्रकाश आर्य, विदिशा ६. श्री मुरलीधर भट्टड़ व श्रीमती लीला देवी, अजमेर ७. श्री भागीरथमल भामू व श्रीमती उषा भामू, अजमेर ८. डॉ. अरुणदेव शर्मा, बैंगलोर ९. श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर १०. श्री रमेश अग्रवाल, कोलकाता ११. श्री सुरेन्द्र सिंह, द्वारका, नई दिल्ली १२. श्री हिम्मत सिंह, झुंझुनु १३. श्री ब्रजमोहन सिंगला, जालन्धर छावनी १४. सुश्री चहक गुप्ता, पंचकूला १५. प्रो. आर.एस. कोठारी, जयपुर १६. श्री इ. करणसिंह, मुजफ्फरनगर १७. श्री मदन कथूरिया व श्रीमती कमला कथूरिया, नई दिल्ली १८. स्वामी सोमानन्द, ऋषि उद्यान, अजमेर।

परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१५ से ३० अप्रैल २०१८ तक)

१. वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर २. श्री बी.बी. गुप्ता, पंचकूला ३. श्रीमती गंगा बाई वैष्णव, छोटी सादड़ी ४. श्री विनय कुमार त्यागी, निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़ ५. श्री हरसहाय सिंह गंगवार, बरेली ६. आर्यसमाज, सैक्टर-१२, पंचकूला ७. श्री पूर्णा राम, बीकानेर ८. श्री कश्मीरीलाल सिंघल, मुक्तसर ९. श्रीमती यशोदा सोमानी, राजगढ़, अजमेर १०. श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ११. श्रीमती मन्जु शंकर व श्री दिलीप शंकर, लखनऊ १२. श्री रामरतन विजयवर्गीय, अजमेर १३. गुंजन शर्मा, अजमेर १४. श्री मूलचन्द भगवानसहाय, अजमेर १५. श्री देवेन्द्र सिंह सिसोदिया, अजमेर १६. श्री एस.के. कोहली, दिल्ली १७. डॉ. ज्ञानप्रकाश बंसल, जालन्धर छावनी १८. श्री चिरंजीवलाल भण्डारी, ठाणे, मुम्बई १९. श्री बालमुकुन्द किशन नवाल, गुलाबपुरा।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २३ से ३० मई, २०१८ - **आर्यवीर दल शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

२. ०५ से १२ जून, २०१८ - **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

३. १७ से २४ जून, २०१८- **योग-साधना शिविर,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

४. १६, १७, १८ नवम्बर २०१८- **ऋषि मेला,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

परोपकारी के पाठकों के लिए एक विशेष भेंट

साहित्य पिता पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित पहली प्रकाशित कविता

मूल कविता

हमें अपनी नवीनतम खोज पूज्य उपाध्याय जी की प्रथम प्रकाशित कविता परोपकारी के पाठकों को भेंट करते हुये हार्दिक आनन्द की अनुभूति हो रही है। आर्यजगत् में कोई भी नहीं जानता कि आप कभी 'मकसद' उपनाम से कवितायें लिखा करते थे। यह कविता 'आर्यपत्र' बरेली के जुलाई १९०३ के अंक में पृष्ठ चौदह पर छपी थी। स्वामी सत्यप्रकाश जी के जन्म से दो वर्ष पहले इस कविता का आविर्भाव हुआ था।

आस्तिकवाद के लेखक के अटल ईश्वर विश्वास का एक-एक पंक्ति से परिचय मिलता है।

'जिज्ञासु'

यह ओ खुर[४] में तेरी ज़िया[२] देखते हैं।
नहीं देख सकते तुझे तीर: बातन[३],
मगर तुझको अहले सफ़ा[४] देखते हैं।
पड़ी है भंवर में जो किश्ती हमारी,
नहीं जुज़[५] ख़ुदा नाख़ुदा[६] देखते हैं।।
फ़कत[७] तू ही राज़िक[८] है सारे जहाँ का,
तेरे दर का सबको गदा[९] देखते हैं।।
रहे ज़िन्दगानी[१०] में गुमराह होकर,
तेरी राह अय रहनुमा[११] देखते हैं।।
शरण किसकी लें किसका लें हम सहारा,
किसी को न तेरे सिवा देखते हैं।।
अगर तू नहीं हर चमन में ख़ुदाया[१२],
तो हर एक गुल[१३] क्यों खिला देखते हैं।।
नहीं कोई 'मकसद'[१४] का दुनिया में हामी,
मगर तेरा हम आसरा देखते हैं।।

टिप्पणी

१. चन्द्र, सूर्य २. ज्योति ३. अज्ञानी हृदय, ४. पवित्र हृदय ५. सिवा ६. नाविक ७. केवल ८. अन्नदाता ९. भिक्षु १०. जीवन पथ पर ११. पथ प्रदर्शक १२. हे प्रभु १३. पुष्प १४. उद्देश्य-लक्ष्य-कवि का उपनाम था/आगे चलकर उपनाम का कभी प्रयोग नहीं किया

हिन्दी अनुवाद

इससे पहले कि मेरी ये अनुवादित धृष्टता कोई गम्भीरता से ले, मैं विज्ञजनों से माफी ही मांग लेता हूँ। देखिये, जानबूझ कर तो हमने ऐसा किया नहीं, पर यह भी कैसे कह दूँ कि अनजाने में हो गया। खैर! जो हो, जैसे ही हमें यह पता लगा कि यह उपाध्याय जी की प्रथम प्रकाशित कविता है हम खुद को रोक न पाये और बन बैठे बड़े भारी कवि, माफ करना अनुवादक कवि। कविता का अस्तित्व अगर केवल शब्दों में होता तो शायद अनुवाद संभव था। पर यहाँ तो पण्डित जी ने अपने हृदय और उसके भावों को ही पंक्तियों में बाँध दिया। हृदय और भावों का अनुवाद कौन करे? और कौन है जो कर सके? हम पर जानते हैं कि इस अनुवाद में पण्डित जी की कविता का लक्षांश भी देखना दृष्टि दोष ही है पर क्या पता कोई हमें पण्डित जी की कविता का अनुवादक समझ ही ले। उसी लालसा के साथ...

सोमेश पाठक

चाँद सूरज में बस इक तेरी रोशनी है।
आँख वाले भल तुझको देखेगें क्या?
तुझको देखेंगे बस कोई उजले हृदय,
दिल के काले भला तुझको देखेंगे क्या?

सिवा तेरे जिसका खिवैया न कोई,
वो नैया प्रभु आज मँझधार में है।
तू ही अन्नदाता है सारे जहाँ का
लगी पंक्तियाँ तेरे दरबार में हैं।

तुझ सा कोई पथ प्रदर्शक मिले अब,
कि हम उम्र भर बस भटकते रहे हैं।
शरण किसकी लें किसका लें हम सहारा,
यही सोचकर हम तड़पते रहे हैं।

हे ईश्वर! नहीं गर तू हर शै में व्यापक,
तो क्यूँकर गुलों में ये रंगीनियाँ हैं।
कि हमको तेरा बस तेरा आसरा है।
सिवा इसके सब बस बे-ईमानियाँ हैं।

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा पुण्यतिथि (३१ मई) पर विशेष

गुरु का शिष्य के नाम पत्र

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, इस नाम से प्राय: प्रत्येक भारतीय राष्ट्रवादी परिचित है, परन्तु उनके पीछे जो प्रेरणा, जो विचार कार्य कर रहे थे, उनसे कम ही लोग परिचित हैं। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम एवं जनजागरण में जिस विचारधारा ने सर्वाधिक प्रभाव डाला, वह थी महर्षि दयानन्द सरस्वती की (वैदिक) विचारधारा। प्राय: सभी क्रान्तिकारी (बौद्धिक) महर्षि की विचारधारा के ही अनुयायी थे और उनमें यदि पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा को अग्रणी कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी। महर्षि दयानन्द सरस्वती और श्यामजी कृष्ण वर्मा के बीच गुरु-शिष्य का सम्बन्ध था, और यदि उनके पत्र-व्यवहार को पढ़ें तो कोई भी उन्हें पिता-पुत्र ही मान लेगा। उन्हीं पत्रों में से एक पत्र, जो कि पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा के लंदन जाने पर महर्षि ने उन्हें लिखा- वह पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। यह पत्र परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र' पुस्तक में पत्र संख्या ७० पर दिया गया है। एक पत्र तो महर्षि ने पूरा श्लोकबद्ध ही लिखा है, और उसके अन्त में लिखा कि ''यहां एक 'परोपकारिणी सभा' स्थापित हुई है, जिसमें आप भी सभासद हैं। उस की व्यवस्था नियमावली को जो राजमुद्रा से युक्त है, आप के पास भेज रहा हूं। इस को सदा आत्मवत् रखें, कालान्तर में बड़ी काम देने वाली होगी।'' ऐसे कई पत्रों की शृंखला है जिसे 'महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र' एवं 'महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दो भाग)' पुस्तकों में दिया गया है। दुर्भाग्य से इन तथ्यों को राजनैतिक प्रयासों से दबाया गया और मांडवी, कच्छ (गुजरात) में बने 'श्यामजी कृष्ण वर्मा स्मारक' में श्यामजी कृष्ण वर्मा की मूर्ति के साथ स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति को चिपका दिया गया। इसे आपराधिक दु:साहस ही कहना चाहिये। जिसका क्रान्ति और क्रान्तिकारी से तनिक भी लेना-देना नहीं उसे 'माण्डवी स्थित स्मारक' में देखकर कुत्सित राजनीति और दुराग्रह स्पष्ट झलकता है। खैर, तथ्य तो तथ्य हैं, उन्हें दबाया नहीं जा सकता। राजनीति तो चलती है, चलती रहेगी, पाठकगण तो इस पत्र में महर्षि दयानन्द द्वारा किये गये सम्बोधन, भावपूर्ण भाषा और ऋषि के उद्देश्यों की गहराई को समझें और आनन्द लें। **-सम्पादक**

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा श्याम जी कृष्ण वर्मा को लिखा गया पत्र[१]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रे ष्ठोपमार्हाय विद्वद्वर्य्याय वैदिकधर्ममार्गैकनिष्ठाय निगमोक्तलक्षणप्रमाणैर्धर्म्यकर्मोपदेशप्रवर्त्तितस्वान्तायैतद्विरुद्धस्योच्छेदने प्रोत्साहितचित्ताय सद्विद्वद्भ्योऽभ्यानन्दार्थं सूक्तसमूहवाक्यानुवाक्यप्रयुक्त-वक्तृत्वाभ्यासशालिने सर्वदा विद्यार्जनदानोत्कृष्टस्वभावाय लब्धार्य-विपश्चिन्मानायास्मत्प्रियवराय श्रीयुतश्यामजि [कृष्ण]वर्म्मणे दयानन्द-सरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमत्रास्म[दीयम]स्ति तत्रत्यं भवदीयं नित्यमेधमानं चाशासे।

बहुमासाभ्यन्तरे भावत्कपत्रानागमेन चित्तानन्दाह्रासात् पुनरानन्दप्रजनना-योत्केनेदानीमेतस्मिन्निम्नलिखिताभिप्रायाणां भवत: स[का]शात् सद्य: प्रत्युत्तराभिकांक्षिणोत्साहयुक्तं मया पत्रं श्रीमत्सनीडं प्रेष्यते।

तत्र कीदृग्गुणकर्मस्वभावा मानवा भूजलवायुभक्ष्यभोज्यलेह्यचूष्या: पदार्थाश्च सन्ति। अतो गत्वाऽद्यपर्यन्तं तत्र भवदात्मशरीरारोग्यमस्ति न वा। यदर्था यात्रा कृता तत्प्रयोजनं प्रतिदिनं सिध्यति न वा। भवत्समर्य्यादे तत्रत्या: कति जना: संस्कृतमधीयते कं कं ग्रन्थं च। तत्र भवत: कियती मासिकी प्राप्तिर्व्ययश्च। कस्मिन्-कस्मिन् समये पठ्यते पाठ्यते चिन्त्यते च। ततोऽत्र कदाऽऽगमनाय निश्चितं कृतमस्ति। किमिदं यथात्र सद्धर्मोपदेशजन्या भवत्कीर्तिस्तूरणं देशदेशान्तरे प्रसृता तत्र कुतो न जाता। जाता चेद् यतो दूरदेशस्थास्ति, तस्मादस्माभिर्न श्रुता किम्। किं वैतत्कारणेऽवकाशो न लब्ध:। एवं चेद् यदा भवता पठनपाठने सम्पूर्यवेदार्थोत्कर्षाभिप्रायसूचकानि वक्तृत्वानि तत्रत्येषु देशेषु कृत्वैवात्रागमने भद्रं नान्यथेति निश्चयो मेऽस्ति। कुत:। धन-लाभात् सत्कीर्तिलाभो महान् शिवकरोस्त्यत:। श्रीयुतप्रियवराध्यापक-मुनियरविलियंस[मो]क्षमूलराख्यानामधुना वेदादिशास्त्राणां मध्ये कीदृङ् नि[श्चय:] प्रेम तदर्थप्रचारा[य] चिकीर्षाऽस्त्यन्येषां च। तत्र नन्दनपुर्यां काचिद् वैदिकी शा[खा]ढ्या थियोसोफीकलसभाप्रेरिता सभास्तीति श्रुतं तत्तथ्यं न वा। भवता [कदा]चिच्छ्रीमतीराजराजेश्वरी महाराज्ञी पारलीमेंटाख्या सभा च दृष्टा न वा। भवता श्रीमत्प्रियवराध्यापकमुनियरविलियंसाख्यादि-भ्योऽत्यादरेण मन्नियोगतो नमस्त इति संश्राव्य कुशलं पृष्ट्वा ते श्रुत्वा यद्यत् प्रत्युत्तरं

ब्रूयुस्तत्तदन्यच्च यद्यद्युक्तं च लिखितुं तत्तस्य सर्वस्यास्य प्रत्युत्तराणि यद्यस्यानुक्तप्रश्नस्यापि लेखार्हमुत्तरं चैतत्सर्वं विस्तरेण संलिख्याविलम्बेन पत्रं मत्सन्निधौ प्रेषणीयमेवेत्यलमधिकलेखेन विचक्षणोत्कृष्टेषु।

मुनिरामाङ्कभूम्यब्द आषाढस्य शुभे दले।
षष्ठ्यां हि मङ्गले वारे पत्रमेतदलेखिषम्॥

इस पते से पत्र भेजना। बनारस लक्ष्मीकुण्ड मुंशी बखतावरसिंह जी मेनेजर वैदिक यन्त्रालय के द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के समीप पहुंचे॥

इदं वैदिकयन्त्रं स्वाधीनं नवीनस्थापितमस्मा[भि]रार्य्यैर्वेदादिशास्त्राणां मुद्राऽक्षरसंसिद्धय इति वेद्यम्॥

[दयानन्द सरस्वती] (मेरठ)

हिन्दी अनुवाद

स्वस्ति श्री श्रेष्ठ उपमा योग्य विद्वद्वर वैदिक धर्म के मार्ग पर परमनिष्ठा वाले वेदों के लक्षण और प्रमाणों से धर्मयुक्त कर्मों के उपदेश में प्रवृत्त मनवाले इसके विरुद्ध कर्मों के उच्छेदन में प्रोत्साहित चित्तवाले उत्तम विद्वानों के आनन्द के लिये सूक्तिसमूह वाक्य अनुवाक्यप्रयुक्त वक्तृता के अभ्यासवाले सर्वदा विद्या के अर्जन और दानरूप उत्तम स्वभाववाले आर्यविद्वानों से मान प्राप्त हमारे प्रिय श्रीयुत श्यामजी कृष्ण वर्मा के लिये स्वामी दयानन्द सरस्वती के बहुत अधिक आशीर्वाद होवें। यहां हम कुशलपूर्वक हैं और वहां आपकी नित्यबढ़ती हुई कुशलता की आशा करता हूं।

बहुत महीनों तक आपका पत्र न आने से आनन्दाऽऽहसात्=सब ओर से खिन्न हुआ चित्त पुनः आनन्द के लिये इस समय निम्नलिखित अभिप्रायों का आप से अतिशीघ्र प्रत्युत्तर की आकाङ्क्षा वाला मैं उत्साहित होकर आप के समीप यह पत्र भेज रहा हूं।

वहां किस प्रकार के गुण-कर्म और स्वभाव वाले मनुष्य हैं, भूमि जल-वायु और खाने पीने चाटने और चूसने के पदार्थ कैसे हैं। यहां से जाकर आज तक आपका शरीर नीरोग रहा वा नहीं? जिस प्रयोजन से यात्रा की वह प्रयोजन प्रतिदिन सिद्ध हो रहा है वा नहीं? आपके साथ वहां कितने व्यक्ति संस्कृत पढ़ रहे हैं और किस-किस ग्रन्थ को? वहां आप की आय और व्यय कितना है? किस-किस समय आप पढ़ते पढ़ाते और मनन करते हैं? वहां से लौटने के लिये कब का निश्चय किया है? क्या कारण है कि जैसे यहाँ सद्धर्म के उपदेश से उत्पन्न हुई आपकी कीर्ति शीघ्र देश देशान्तर में फैली वैसी वहां क्यों नहीं फैली? अथवा कीर्ति फैली हो पर यहां से दूर देशस्थ होने से हमने नहीं सुनी हो। अथवा क्या इसके लिये अवकाश प्राप्त नहीं हुआ। यदि ऐसा हो तो पठन-पाठन पूर्ण कर वेदार्थ के उत्कर्षसूचक व्याख्यान वहां के देशों में देकर ही यहां आने में आप का कल्याण है, यह मेरा निश्चय है। क्योंकि धन के लाभ से सत्कीर्ति का लाभ महान् कल्याण करने वाला होता है। श्रीयुत प्रिय अध्यापक मोनियर विलियम्स और मोक्षमूलर का सम्प्रति वेदादि शास्त्रों के विषय में कैसा निश्चय है? उस के प्रचार के लिये प्रेम और इच्छा इनकी तथा अन्यों की कैसी है? वहां लन्दन नगर में कोई वैदिक शाखा रूप थियोसोफिकल से प्रेरित धनाढ्य सभा है, ऐसा सुना है, वह सत्य है वा नहीं? आपने कभी श्रीमती राजराजेश्वरी साम्राज्ञी और पार्लियामेण्ट नाम की सभा देखी वा नहीं। आप श्रीमान् प्रिय अध्यापक मोनियर विलियम्स आदि के लिये अत्यादर पूर्वक मेरी ओर से नमस्ते कहकर कुशल पूछकर वे जो-जो प्रत्युत्तर देवें उस उस को तथा अन्य जो लिखने योग्य हो उस सब के प्रत्युत्तर और जो पूछा नहीं गया है उस का भी लिखने योग्य उत्तर यह सब विस्तार से लिखकर शीघ्र मेरे समीप भेजें। उत्कृष्ट विद्वान् के लिये अधिक लिखने से बस।

सं० १९३७, आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की छठी तिथि, मङ्गलवार को मैंने यह पत्र लिखा।

इस पते से पत्र भेजना। बनारस लक्ष्मीकुण्ड मुंशी बखतावरसिंह जी मेनेजर वैदिक यन्त्रालय के द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के समीप पहुंचे॥

हमने और आर्यों ने यह अपना नवीन वैदिक यन्त्रालय वेदादि शास्त्रों को छपवाने के लिये स्थापित किया है।

[दयानन्द सरस्वती] (मेरठ)

---

१. यह पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में था। सभा के मन्त्री श्री हरविलास शारदा ने यह पत्र दयानन्दग्रन्थमाला में संवत् १९८१ में छापा था।

तीन रत्नों की सामर्थ्य से सुक्रतु बनें

महात्मा चैतन्यस्वामी

क्रतु का अर्थ है कर्म करने वाला अर्थात् व्यक्ति को सदा कर्मशील बने रहना चाहिए। वेद हमें यही प्रेरणा देता है-

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(यजु. ४०-२)

हे मनुष्य! (इह) इस लोक में (कर्माणि कुर्वन् एव) कर्मों को करते हुए ही तुझे जीना है, (**शतं समाः जिजीविषेत्**) तू सौ वर्ष जीने की कामना कर, (**एवं त्वयि इतः अन्यथा न अस्ति**) कर्म करते हुए सौ वर्ष जीना ही तेरे जीवन का एकमात्र नियम है और कोई अन्य नियम नहीं मगर (**न कर्म लिप्यते नरे**) इन कर्मों में उलझ नहीं जाना बल्कि विरत होकर सदा कर्मशील बने रहना। जीव कर्म करने में तो स्वतन्त्र है मगर फल भोगने में वह परतन्त्र है क्योंकि कर्मों का फल तो न्यायकारी परमात्मा ने देना है। इसलिए इस कर्म-स्वतन्त्रता का लाभ उठाकर सदा कर्मशील बने रहना चाहिए और ये कर्म निष्काम भाव से करने चाहिए। यजुर्वेद में ही अन्यत्र जीव को क्रतु कहा है- **ओ३म् क्रतो स्मर** (यजु. ४०-१५) श्री कृष्ण जी भी कहते हैं- **अहं क्रतुरहं यज्ञः** (गीता ९-१६)। गीता में अन्यत्र यह भी कहा गया है कि बिना कर्म के तो व्यक्ति एक क्षण के लिए भी नहीं रह सकता है। अतः कर्म तो करने ही हैं मगर यदि व्यक्ति के द्वारा पुण्यकर्म किए जाएं तो इससे वह निष्काम-कर्मी और सुक्रतु बन जाता है। वेद में सुक्रतु बनने की प्रेरणा दी गई है और साथ ही प्रक्रिया बताई गई है-

ओ३म् त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः।।

(सा. १०१५)

मन्त्र में सुक्रतु बनने के लिए मुख्यतः पहली बात कही गई कि- **त्रीणि त्रितस्य धारया**, जो व्यक्ति जीवन में तीन बातों को धारण कर लेता है, वह सुक्रतु बन जाता है। ऐसी बहुत सी तीन बातें हैं मगर यहाँ हम त्रिलोकी की उन तीन मणियों की बात करेंगे जिनका उल्लेख वेद में इस प्रकार किया गया है-

ओ३म् देवाञ्जन त्रैककुदं परि मा पाहि विश्वतः।
न त्वा तरन्त्योषधयो बाह्याः पर्वतीया उत।।

(अथर्व. १९-४४-६)

यहाँ जिन तीन मणियों की बात कही गई है, वे वास्तव में हमारा शरीर, मन और मस्तिष्क (अर्थात् बुद्धि व ज्ञान) ही हैं। ऋग्वेद में इन्हीं तीन रत्नों की ओर संकेत किया गया है-

ओ३म् यदिन्द्राग्नी अवमस्यां पृथिव्यां मध्यमस्यां परमस्यामुत स्थः।
अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य।।

(ऋ. १-१०८-९)

इस मन्त्र के आध्यात्मिक अर्थ में 'अवम पृथिवी' शरीर है, 'मध्यमपृथिवी' हृदयान्तरिक्ष है और 'परमपृथिवी' मस्तिष्करूप द्युलोक है। शरीर, मन और मस्तिष्क अर्थात् स्वास्थ्य, नैर्मल्य व ज्ञानदीप्ति क्रमशः तीन पृथिवियों के तीन रत्न हैं। वेद में अन्यत्र कहा है-

गुह्येन व्रतेन त्रितः असि। (ऋ. १-१६३-३)

प्रेरणा दी गई है कि हृदयरूप गुहा के साथ सम्बद्ध ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके तू शरीर, मन व मस्तिष्क तीनों की शक्ति का विस्तार करने वाला बन। ये तीन ही जीवन के सर्वोत्कृष्ट धन हैं तथा इनसे ही हमें 'महाधन' मोक्षानन्द की उपलब्धि भी प्राप्त हो सकेगी। वैदिक-सन्ध्या में गायत्री मन्त्र के बाद हम जिस मन्त्र का पाठ करते हैं वह है- **शं नो देवीरभिष्टये...** महर्षि जी इसका अर्थ करते हैं- 'आरोग्य, मानसिक सुख और आत्मिक आनन्द की वृष्टि करें।' यहाँ पर प्रारम्भ में ही प्रभु से प्रार्थना कर दी गई है कि हमें आरोग्यता, मानसिक सुख और आत्मिक आनन्द दें। परमात्मा ने हमें हमारे कर्मों के आधार पर बहुत कुछ दिया हुआ है। वेद में एक मन्त्र आया है-

ओ३म् विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः।
सवितारं नृचक्षसम्।।

(यजु. ३०-४)

उस प्रभु ने हमें बहुत कुछ दे रखा है। यह शरीररूपी रथ उसी का दिया हुआ है और फिर इस शरीर में दो प्रकार के करण (उपकरण) दिए- बहिष्करण- अर्थात् पाँच (वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ, गुदा) कर्मेन्द्रियाँ और पाँच (श्रोत्र, नेत्र, घ्राण, रसना, त्वचा) ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं और फिर इनसे भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मन, बुद्धि, चित्त और अंहकार समन्वित अन्तःकरण दिया। हमारा कर्त्तव्य बनता है कि अनेक प्रकार के अनमोल रत्नों से सुसज्जित इस रथ का सदुपयोग करके अपने जीवन को सार्थकता प्रदान करें।

१. शारीरिक स्वस्थता- वेद में प्रभु कहते हैं-

ओ३म् युनज्मि ते ब्रह्मणा केशिना
हरी उप प्र याहि दधिषे गभस्त्योः।
उत्त्वा सुतासो रभसा अमन्दिषुः
पूषण्वान्वज्रिन्त्समु पत्न्यामदः।।

(ऋ. १-८२-६)

हे मानव! (**ते ब्रह्मणा**) तेरे वर्धन के लिए मैं (**केशिना**) प्रकाश की रश्मियों वाले (**हरी**) इन्द्रियाश्वों को (**युनज्मि**) तेरे शरीर-रथ में जोतता हूँ (**उपप्रयाहि**) इस रथ से तू मेरे समीप आने वाला हो। इसके लिए तू (**गभस्त्योः**) अपने हाथों में (**दधिषे**) इन घोड़ों की लगामों को धारण करने वाला बन। (**उत**) और (**रभसाः**) शक्ति को देने वाले (**सुतासः**) भोजन से उत्पन्न ये सोमकण (**त्वा अमन्दिषुः**) तुझे आनन्दित करें। तू (**पूषण्वान्**) अपना उचित पोषण करने वाला बन। (**वज्रिन्**) हाथ में क्रियाशीलतारूप वज्र को लिए हुए (**पत्न्या**) वेदवाणीरूप पत्नी के साथ (**समु मदः**) खूब ही हर्ष का अनुभव कर। स्वस्थ शरीर, पवित्र मन तथा उत्कृष्ट ज्ञानी व्यक्ति ही प्रभु-प्रदत्त इन्द्रियों रूपी घोड़ों को दृढ़तापूर्वक पकड़ सकता है इसलिए सर्वप्रथम हमें उचित आहार, आचार एवं व्यवहार आदि से शारीरिक स्वस्थता प्राप्त करनी चाहिए। शरीर-रूपी रथ यदि स्वस्थ नहीं होगा तो आगे की यात्रा हो ही नहीं सकेगी, इसलिए निरोगी एवं सबल शरीर के महत्त्व को समझना चाहिए। शारीरिक स्वस्थता के लिए महर्षि चरक जी तीन सूत्र देते हैं- आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य। सीधा सा अर्थ है कि हमारा आहार सात्त्विक एवं पुष्टिकारक होना चाहिए। इसके साथ ही निद्रा भी पूरी लेनी आवश्यक है अन्यथा यह शरीररूपी रथ रिचार्ज नहीं हो सकेगा। इसके साथ ही अपने शरीर की धातुओं को सुरक्षित रखना चाहिए ताकि इन सोमकणों द्वारा हमारा शरीर सदा ही पुष्ट बना रहे। इस प्रकार के स्वस्थ एवं सबल शरीर द्वारा ही हमारी यात्रा ठीक प्रकार से पूरी हो सकती है। वेद में एक बहुत ही सुन्दर मन्त्र आया है-

ओ३म् अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वे देवा अदितिः पंच जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥

(ऋ. १-८९-१०)

इस मन्त्र में स्वास्थ्य को 'अ-दिति' अखण्डन कहा गया है और साथ ही कहा गया है कि यह अदिति ही ज्ञान का प्रकाशक है, यही सब प्रकार की अतिवादिताओं से बचाता है, यही हमारी माता और पिता तथा पुत्र है अर्थात् उत्तमता का सृजन करने वाला-रक्षा करने वाला और पुत्रवत् सुख देने वाला है। समस्त दिव्यगुणों का निर्माण उत्तम स्वास्थ्य द्वारा ही होता है। इस दृष्टिकोण से यह देवों का भी देव है। अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय, इन पंच कोशों का 'सहस्' स्वास्थ्यमूलक यही है। हमारा जो भी विकास हुआ है वा होने वाला है, वह सब स्वास्थ्य पर ही निर्भर करता है।

२. मानसिक पवित्रता- शरीर स्वस्थ भी हो मगर यदि मन पवित्र नहीं तो भी व्यक्ति अपने लक्ष्य से भटक जाएगा, क्योंकि **मनसः वलायकः असि**-मन ही इन्द्रियों का संचालक तथा आत्मा में लीन कराने वाला है। मन के दो ही काम हैं- संकल्प और विकल्प, इसलिए मन को सदा संकल्पशील ही बनाना चाहिए। यदि आपने मन को कहीं एक बार विकल्प दे दिया तो वह आपको हजारों विकल्पों में जीवन भर उलझाए रखेगा। मन की शक्ति को पहचानकर तद्वत् इसका सदुपयोग करने की आवश्यकता है। यजुर्वेद के छः मन्त्रों में मन का जो विवेचन मिलता है वह अपने आप में अनुपम है। वहां मन को **यज्जाग्रतो** -सोते समय भी चलने वाला, **हृत्प्रतिष्ठम्**-हृदय में प्रतिष्ठित, **सुसारथि**-उत्तम सारथी, **दैवम्**-दिव्यता से परिपूर्ण, **प्रज्ञानम्**-प्रकृष्ट ज्ञान से परिपूर्ण, **चेतः**-आत्म-चेतना का साधक, **धृतिश्च**-धैर्य का साधन, **अमृतं ज्योतिः**- अमरत्व की ज्योति देने का साधन आदि बताया गया है। इतने शक्तिशाली उपकरण का भी यदि व्यक्ति सही-सही उपयोग न कर पाए तो इसे उसकी भारी भूल ही माना जाएगा, इसलिए मन को साधना चाहिए और उसे 'शिवसंकल्पी' बनाना चाहिए। यदि वह शिवसंकल्प के साथ जुड़ गया तो समझो वह आपको लक्ष्य तक अवश्य ही पंहुचा देगा, इसमें जरा सा भी सन्देह नहीं। मन वास्तव में चंचल नहीं बल्कि व्यक्ति ही इसे विकल्प देकर चंचल बनाता है, क्योंकि वह चित-वृत्तियों को स्वतन्त्र छोड़ देता है। योगदर्शन में-

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः। (यो.द. १-६)

प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति-ये पांच वृत्तियां बताई गई हैं। आगे इनके लक्षण बताए गए हैं और फिर इन्हें कैसे रोका जाए इसका उपाय बताया-

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः। (यो.द. १-१२)

अर्थात् निरन्तर अभ्यास और वैराग्य के द्वारा इन वृत्तियों को हटाया जा सकता है। गीता में भी मन को साधने का यही उपाय बताया गया है-

असंशय महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥

(गी. ६-३५)

हे महाबाहु! नि:सन्देह मन का निग्रह करना बड़ा कठिन है,यह चचंल है, किन्तु हे कुन्ती पुत्र! वह अभ्यास और वैराग्य के द्वारा वश में किया जा सकता है।

3. बुद्धि की उत्कृष्टता-मुख्यत: बुद्धि दो प्रकार की होती है-सन्देहात्मक और निर्णयात्मक। गीता के अनुसार संशयग्रस्त व्यक्ति का नाश हो जाता है-

संशयात्मा विनश्यति (गीता ४-४०)

और ऐसी बुद्धि को ही '**अव्यवसायी**' बुद्धि (गी. २-४१) कहा है। ज्ञान दो प्रकार का होता है-स्वाभाविक और नैमित्तिक। नैमित्तिक के भी आगे चार भेद हैं-१. अभावात्मक, २. संशयात्मक, ३. भ्रमात्मक, ४. निश्चयात्मक। गीता के अनुसार व्यवसायात्मिका बुद्धि तो एक ही है मगर अव्यवसायी लोगों की बुद्धियाँ अनेक शाखाओं में बँटी होती हैं (गी. २-४१)। व्यवसायात्मक बुद्धि का भाव है-किसी भी संकल्प को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील, एकाग्रबुद्धि, निर्णयात्मक बुद्धि, आगे चलकर इसी को 'बुद्धि-योग' कहा गया है। यही बुद्धि निष्कामकर्मी बनती है। ऐसा योगी ही जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त होता है और वही 'स्थितप्रज्ञ' बनता है। (गीता ३-४२) में कहा गया है कि इन्द्रियाँ श्रेष्ठ हैं, इन्द्रियों की अपेक्षा मन श्रेष्ठ है, मन की अपेक्षा बुद्धि श्रेष्ठ है, बुद्धि की अपेक्षा यह 'आत्मा' अधिक श्रेष्ठ है। दर्शनशास्त्र में धर्म, ज्ञान, ऐश्वर्य, वैराग्य तथा अधर्म, अज्ञान, अनैश्वर्य और अवैराग्य की चर्चा की गई है। इनमें से पहले चार लक्षण सात्त्विक बुद्धि के और अन्त के चार तामसिक बुद्धि के परिचायक हैं। इन प्रथम चार तक निर्णयात्मक-बुद्धि ही पहुँचा सकती है, संशयात्मक तो अन्तिम चार में उलझाकर रख देती है। निर्णयात्मक-बुद्धि मैं और मेरा का चिन्तन करके इस निर्णय पर पहुँच जाती है कि मेरा नश्वर है-मैं अनश्वर हूँ, मैं एक हूँ-मेरा अनेक है, मैं का जन्म नहीं और मेरा का जन्म है। गायत्री मन्त्र में **प्रचोदयात्** साधक की आवश्यकता है और **धीमहि** उस आवश्यकता की पूर्ति का साधन है। **धीमहि** क्रिया है **प्रचोदयात्** उसकी प्रतिक्रिया है। **धीमहि** हेतु साधक को श्रम करना है **प्रचोदयात्** का सम्पादन परमात्मा को करना है। **धीमहि** जितना होगा उतना ही **प्रचोदयात्** होगा, **धीमहि** के गर्भ में **प्रचोदयात्** पलता है। **धीमहि** योग की धारणा को परिपक्व करना है-इसी से **प्रचोदयात्**; ऋतम्भरा-प्रज्ञा की प्राप्ति होगी।

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

शङ्का समाधान - २५

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का- १. ऋत्विग्वरण के समय संकल्प मन्त्र के उच्चारण में संकल्प मन्त्र के वाक्य ''...कलियुगे कलिप्रथमचरणे'' के बाद जो अमुक संवत्सर के उच्चारण के निर्देश हैं, तो वहाँ पर विक्रम संवत्सर का या किसी किसी अन्य संवत्सर का उच्चारण वांछित है?

२. यज्ञ में उपस्थित लोगों द्वारा तिलक लगाते समय अक्सर कुछ लोग झट से अपना एक हाथ सिर के पीछे रख लेते हैं और कुछ लोग संस्कार के समय सिर में रूमाल ओढ़ लेते हैं, तो ये दोनों कृत्य विहित हैं या नहीं?

३. संकल्प मन्त्र में 'ब्रह्मणो' शब्द दिया है, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका में भी। 'यो भूतञ्च भव्यञ्च...' चार वेदमन्त्रों में 'ब्रह्मणे' पाया जाता है। अतः 'ब्रह्मणो' और 'ब्रह्मणे' में कौन शुद्ध है?

-शिवप्रसाद आर्य, बिजलीखेरा, बांदा

समाधान- संकल्प पाठ करते समय सृष्टि संवत या किसी भी संवत् का उच्चारण का प्रयोजन कालगणना है। सर्गारम्भ से अब तक अथवा किसी (विक्रम आदि) संवत् विशेष से क्रियमाण कर्म के प्रारम्भिक काल तक के मध्यवर्ती काल का ठीक-ठीक परिज्ञान कराना ही इसका प्रयोजन है।

विक्रम संवत् अथवा किसी अन्य संवत्सर (कलि संवत्, शक संवत् आदि) का प्रयोग सृष्टि संवत् की अपेक्षा संक्षिप्त होने से सुगम है। व्यवहार में विक्रम संवत् सर्वाधिक प्रचलित है। इसीलिए प्रायशः इसका उच्चारण किया जाता है। किन्तु इसके अतिरिक्त कलि, शक अथवा दयानन्दाब्द का प्रयोग भी सम्भव है। तद्यथा-'ओं तत्सत् श्री ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वते मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे ''सप्तपञ्चाशद् अधिक द्विसहस्रतमे वैक्रमाब्दे''...अत्रेदं कर्म क्रियते' में अधोरेखांकित के स्थान पर-''**चतुर्नवत्यधिक शततमे दयानन्दाब्दे**'' का प्रयोग सम्भव है। जिस प्रकार आजकल दैनन्दिन व्यवहार में ईस्वीय सन् का प्रयोग हो रहा है। इसी प्रकार पूर्वकाल से सभी शुभकर्मों के प्रारम्भ में संकल्पपाठ के साथ ही कालगणनार्थ किसी न किसी संवत् का प्रयोग किया जाता रहा है।

२. यज्ञ करते समय अनेक शास्त्रविहित कृत्य छोड़कर उनके स्थान पर अवैदिक/अशास्त्रीय कृत्य होने लगे हैं। इन्हीं में यज्ञोपवीत के स्थान पर कलावा (हाथ में रंगीन धागा बाँधना) आ गया है। साथ ही यजमान आदि की पहचान, प्रसन्नता आदि की दृष्टि से तिलक आदि (कहीं तिलक के स्थान पर या उसके साथ ही रंगीन वस्त्र की पट्टिका आदि) भी प्रचलन में आ गए हैं। यज्ञ करते समय तिलक शास्त्र विहित नहीं है, इसलिए तिलक करते समय सिर पर वस्त्र वा हाथ रखना भी निष्प्रयोजन है।

३. संकल्पपाठ में व्यवहृत 'ब्रह्मणो' तथा ''यो भूतञ्च...'' आदि चार मन्त्रों में पठित 'ब्रह्मणे' पद के रूपान्तर को देखकर आपकी शङ्का का मूल इन पदों के भेद को न जानना है।

वस्तुत संकल्पपाठ में पठित 'ब्रह्मणो' पद ब्रह्मन् इस प्रातिपदिक का षष्ठी विभक्ति के एकवचन (पञ्चमी एक वचन में भी) का रूप है। ब्रह्मन्+ङस् = ब्रह्मणः। संकल्प पाठ में विसर्ग के आगे द्वितीये के दकार के होने से विसर्ग को क्रमशः स्, रू तथा उ होने पर गुण होकर- 'ब्रह्मणो' पद निष्पन्न हुआ है।

मन्त्रस्थ 'ब्रह्मणे' पद ब्रह्मन् प्रातिपादिक से नमः (ब्रह्मणे नमः) के योग में चतुर्थी एकवचन में- ब्रह्मन्+ङे= 'ब्रह्मणे' पद निष्पन्न हुआ है।

अतः संकल्पान्तर्गत 'ब्रह्मणो' पद ब्रह्मन् का षष्ठी एकवचन (पञ्चमी एक वचन में भी) तथा मन्त्रस्थ 'ब्रह्मणे' ब्रह्मन् का चतुर्थी एकवचन है। दोनों रूप अपने स्थान पर शुद्ध हैं।

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

संस्था-समाचार

जन्मदिवस पर यज्ञ- ऋषि उद्यान की भव्य यज्ञशाला में ३० अप्रैल को अजमेर निवासी श्री राजेश आनन्द ने अपने जन्मदिन पर अतिथियज्ञ के होता के रूप में यज्ञ किया । परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक शुभकामनायें।

शोक समाचार- ऋषि उद्यान में अनेक वर्षों से स्वाध्याय एवं साधनारत स्वामी देवेन्द्रानन्द जी का २९ अप्रैल रविवार को प्रातःकाल देहावसान हो गया। श्रद्धाञ्जलि सभा २ मई बुधवार को दोपहर पंचकूला हरियाणा में सम्पन्न हुई। परोपकारिणी सभा एवं ऋषि उद्यान परिवार की ओर से स्वामी जी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, वैदिक यन्त्रालय, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, अन्त्येष्टि स्थल-मलूसर, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, उपदेश ग्रहण करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्मचारी, आर्यवीर, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। सभी आगन्तुकों के निवास एवं नाश्ता, भोजन, दूध आदि की समुचित व्यवस्था ऋषि उद्यान में उपलब्ध रहती है। पिछले १५ दिनों में भटिण्डा, बुरहानपुर, दिल्ली, पुष्कर, जयपुर, गुरुग्राम, प्रतापपुरा, रेवाड़ी, बुलन्दशहर, छोटी सादड़ी, मोदीनगर, मसूदा, दादरी, हरिद्वार, उज्जैन, झज्जर, उत्तरकाशी, हजारीबाग, सूरत आदि स्थानों से ३९ अतिथि ऋषि उद्यान पधारे।

दैनिक प्रवचन-प्रातः कालीन सत्संग में स्वामी आशुतोष जी, आचार्य कर्मवीर जी और आचार्य सोमदेव जी के व्याख्यान हुए। सोमवार से शुक्रवार तक सायंकालीन सत्संग में आचार्य सत्येन्द्र जी ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पुस्तक का पाठ एवं व्याख्यान किया। सायंकालीन प्रवचन में ही स्वामी शंकर देव जी, स्वामी सत्यव्रतानन्द जी तथा स्वामी शिवानन्द जी ने व्याख्यान दिया। शनिवार सायंकालीन सत्संग में श्री मुमुक्षु मुनि और श्री लक्ष्मण मुनि जी ने व्याख्यान दिया। रविवार प्रातःकालीन सत्संग में ब्र. उत्तम जी ने भजन सुनाया। सायंकालीन प्रवचन में ब्र. बालकृष्ण जी और ब्र. प्रणव जी ने व्याख्यान किया।

पं. तुलसीराम जी स्वामी, मेरठ

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

मेरठ कभी आर्य विद्वानों की खान था। किस-किस का नाम लें? पं. गंगाप्रसाद जज, पं. घासीराम जी, श्री रामचन्द्र जी वैश्य पत्रकार, महाकवि दुर्गासहाय 'सरूर', श्री पं. तुलसीराम जी स्वामी, पं. लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द युग के विद्वानों की विशेषता यह थी कि प्रत्येक विद्वान् वैदिक सिद्धान्तों के मण्डन में लेखनी व वाणी चलाने में गौरव मानता था और विरोधियों का उत्तर देने में तत्पर रहता था। श्री पं. तुलसीराम स्वामी जी ने वेद-भाष्य किया, दर्शनों की, उपनिषदों की टीकायें लिखीं। मुरादाबाद के ज्वालाप्रसाद मिश्र की आर्यसमाज के खण्डन में लिखी विषैली पुस्तकों के सप्रमाण उत्तर लिखकर पौराणिकों में हड़कम्प मचा दिया। आपके छोटे भाई श्री छुट्टनलाल स्वामी भी आपके चरणचिह्नों पर चलते रहे। मनुस्मृति आदि सब पर तुलसीराम जी ने टीका लिखी।

पं. तुलसीराम जी का मासिक पत्र 'वेदप्रकाश' उस युग का लोकप्रिय आर्य पत्र था। आर्यसमाज के प्रत्येक आन्दोलन में इस मासिक ने अविस्मरणीय योगदान दिया यथा लाला लाजपतराय का देश से निष्कासन, आर्यसमाज का दमन, पटियाला के राजद्रोह का महाभियोग, रहतियों की शुद्धि, मांसाहार के प्रचार का प्रतिकार, गुरुकुल आन्दोलन में बढ़-चढ़कर सहयोग, पं. लेखराम जी के बलिदान पर आर्यों में उत्साह भरना। धर्मप्रचार की लहर चलाने में श्री तुलसीराम ने अथक कार्य किया। वह आर्यसमाज के निर्माताओं की अग्रिम पंक्ति के नेता और विद्वान् थे।

स्वामी रामेश्वरानन्द जी

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आर्यसमाज के देश विख्यात प्रतापी संन्यासी स्वामी रामेश्वरानन्द जी का जीवन बड़ा महत्त्वपूर्ण है। वह अत्यन्त गुणसम्पन्न, विद्वान्, सुवक्ता, कर्मठ, निर्भीक और संघर्षशील महात्मा थे। सन् १८९० में उ. प्र. के एक कृषक जाट परिवार में जन्मे स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने काशी, खुर्जा, ज्वालापुर में संस्कृत का गम्भीर अध्ययन किया। आपकी एक बहुत बड़ी विशेषता यह थी कि आप जातिवाद से बहुत ऊपर थे। मैंने स्वामी जी को बहुत निकट से देखा और लम्बे समय तक उनके सम्पर्क में रहा, परन्तु मैं कभी भी किसी से उनकी जात बरादरी नहीं पूछा करता। साधु से जाति पूछने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

पं. महेन्द्र कुमार जी शास्त्री उन्हें तब से जानते थे जब आप खुर्जा में पढ़ते थे। आपने एक दिन वैसे ही स्वामी जी की चर्चा चल पड़ने पर बताया कि आपका जन्म एक जाट परिवार में हुआ था।

आप स्वामी भीष्म जी के सम्पर्क में आकर वैदिकधर्मी बने। आपकी वाणी में बहुत रस था, ओज था और श्रोताओं को खींचने व बाँधकर रखने की कला जानते थे। आपने देशभर में घूम-घूमकर ग्रामों में, कस्बों में, और नगरों में बड़ा प्रचार किया। आपने आर्यसमाज को कई जाने माने विद्वान् दिये। आचार्य सत्यप्रिय जी शास्त्री हिसार तथा वयोवृद्ध ज्ञानवृद्ध श्री पं. भद्रसेन जी होशियारपुर आपके शिष्यों में से हैं। आर्यसमाज के प्रख्यात विद्वान् संन्यासी स्वामी पूर्णानन्द जी मेरठ जनपद वाले भी आपके शिष्य थे। विद्यागुरु तो उनके श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, वेदानन्द जी रहे, परन्तु संन्यास की दीक्षा आपसे ली थी।

आप बड़े निडर वक्ता थे। भय वाली रग जो मनुष्यों में होती है, वह आपमें थी ही नहीं। यही कारण है कि आप सारा जीवन संघर्षशील रहे। देश के स्वराज्य संग्राम में तो जेल में गये ही, आर्य सत्याग्रह हैदराबाद और हिन्दी रक्षा सत्याग्रह में भी जेल गये। गो-रक्षा सत्याग्रह १९६६ में आपने बहुत गर्मी पैदा की। अपनी वीरता के कारण आप सदैव युवा वर्ग के प्रेरणास्रोत रहे। जब हिन्दी सत्याग्रह के आरम्भिक दिनों में सरकार की कुचाल आर्यसमाज को थकाकर हताश-निराश करने की थी, उस समय सत्यग्रहियों को बन्दी बनाकर दूर-दूर ले जाकर छोड़ा जाता था, तथा कुछ चुने हुये भयानक सत्याग्रहियों को ही पकड़कर कारागार में डाला जाता था। उन्हीं में स्वामी श्री ईशानन्द जी, आचार्य भद्रसेन जी, पं. सत्यप्रिय जी तथा इन पंक्तियों का लेखक भी था। हम सवा सौ-डेढ़ सौ सत्याग्रही अम्बाला जेल में थे। वहीं स्वामी रामेश्वरानन्द जी को बन्दी बनाकर आर्य सत्याग्रहियों से एकदम पृथक् रखा गया। हमें स्वामी जी के उसी विशाल कारागार में होने की भनक ही न लगने दी, परन्तु कारागार में बन्दी सत्याग्रही लोग भी जैसे-कैसे ऐसी जानकारी प्राप्त कर ही लिया करते हैं।

हम टोलियाँ बनाकर स्वामी जी की कालकोठरी में दर्शन करने पहुँच जाते। जेल में कोई नेता तो था नहीं। स्वामी जी हम सबको मिलजुल कर अनुशासन में और संगठित होकर रहने की प्रेरणा देते थे।

स्वामी जी एक कुशल शास्त्रार्थ महारथी भी थे। आपका कभी देहलवी से भी शास्त्रार्थ हुआ था। आप बड़े मधुर स्वर में अपने व्याख्यान प्रवचन के आरम्भ में कुछ पद्य गाया करते थे। श्री पं. ओम्प्रकाश जी वर्मा आपकी नकल (Mono Acting) करके उत्सवों में मनोरञ्जन किया करते थे। स्वामी जी वेदोपनिषद, दर्शन, ऋषिकृत ग्रन्थों के जाने-माने विद्वान् और महान् तार्किक थे। हैदराबाद सत्याग्रह काल से अर्धशताब्दी तक आप आर्यसमाज के सर्वश्रेष्ठ लोकप्रिय वक्ताओं व विद्वानों में से एक थे।

ईश्वर की सत्ता, ईश्वर की कृति व मनुष्य की कृति पर उनके व्याख्यान आज भी मेरे हृदय पर अंकित हैं। परमात्मा बिना हाथों के, बिना यन्त्रों के कुछ बनाता है। जीव को हाथ व हथियार चाहिये। परमात्मा अन्धेरे में सब कुछ बनाता है। जीव प्रकाश के बिना सूई में धागा तक नहीं डाल सकता। उनके रोचक संस्मरण यहाँ क्या-क्या दूँ? एक बार ग्रीष्म ऋतु में हरियाणा के एक ग्राम में दोपहर के समय पहुँचे। चौधरी पेड़ के नीचे ताश खेल रहे थे। एक भक्त चौधरी ने कहा, आप संन्यासी हैं। मुझे कोई खाज के लिये जड़ी-बूटी बतायें। आप जानते ही होंगे, ऐसे कहते हुये वह चौधरी हाथ से खूब खाज किये जा रहा था।

स्वामी जी ने कहा, औषधि जानता तो हूँ, परन्तु तू मेरी औषधि का सेवन नहीं करेगा, मेरी मानेगा नहीं। उसने कहा, ''नहीं महाराज! जैसा आप कहेंगे वैसा ही मैं करूँगा।'' स्वामी जी ने कहा, ''सबसे पहले तो इस बात का ध्यान रखें कि जब खाज हो तो खुजलाना नहीं है।'' वह चौधरी जोर-जोर से खुजलाये जा रहा था और बोला, स्वामीजी, ''अब नहीं खुजलाऊँगा और जड़ी-बूटी बताओ।''

स्वामी जी ने वहाँ बैठे चौधरियों से कहा, बोलो इसे आगे क्या बतलाऊँ? यह मेरी पहली बात ही नहीं मान रहा। इस पर सब हँस पड़े। नारायणगढ़ में एक बार कस्बे के बाहर सब विद्वानों का एक घर में भोजन था। नन्दलाल जी गीतकार ने कहा, ''आप संन्यासी हैं। सबकी ओर से गृहस्थी को आप आशीर्वाद दें। आपने कहा आशीर्वाद इतना सस्ता नहीं। मैं सबको आशीर्वाद नहीं देता। चण्डीगढ़ समाज का एक अधिकारी बस पर चढ़ाने आया और बोला, धन्यवाद। तो स्वामी जी बोले, धन्यवाद से बस का टिकट नहीं आता।''

पुण्यतिथि २९ मई पर विशेष स्मरण

चौधरी चरणसिंह: एक विलक्षण व्यक्तित्व

डॉ. वेदपाल मेरठ

सन् १८५७ के विद्रोह के प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी राजा नाहरसिंह, बल्लभगढ़ (फरीदाबाद) हरियाणा को दिल्ली के चाँदनी चौक में फाँसी दी गई थी। राजा के सम्बन्धी एवं अनुयायियों पर जारी ब्रिटिश सरकार के दमन-चक्र से बचाने के लिए राजा के परिजन चौधरी बादामसिंह अपने परिवार के साथ बल्लभगढ़ छोड़कर उत्तरप्रदेश में जा बसे। चौ. बादाम सिंह के पुत्र चौ. मीरसिंह के यहाँ २३ दिसम्बर १९०२ को नूरपुर (हापुड़) में चौ. चरणसिंह का जन्म हुआ। चौ. चरणसिंह ने आगरा विश्वविद्यालय से बी.एस.सी., एम.ए. (इतिहास) तथा एल.एल.बी. की डिग्री प्राप्त की।

सन् १९२८ में गाजियाबाद में स्वतन्त्ररूप से वकालत प्रारम्भ करने के साथ ही चौधरी साहब आर्यसमाज के सदस्य बन गए। इसके पश्चात् चौधरी साहब सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य पर निरन्तर सक्रियता के साथ अपनी अमिट छाप छोड़ते रहे। जिसे अति संक्षेप में निम्न प्रकार देखा जा सकता है-

स्वतन्त्रता सेनानी- सन् १९२९ में गाजियाबाद नगर कांग्रेस कमेटी की स्थापना की तथा १९३९ तक विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे। सन् १९३० में नमक कानून तोड़ने पर छ: मास का कारावास हुआ। नवम्बर १९४० में व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने पर एक वर्ष कैद की सजा हुई। पुन: अगस्त १९४२ में डी.आई.आर. के तहत गिरफ्तार किया गया और नवम्बर १९४३ में रिहा हुए।

गाजियाबाद में रहते हुए आर्यसमाज गाजियाबाद के प्रमुख पदों पर सक्रिय कार्य करते रहे। सन् १९३९ में गाजियाबाद से मेरठ आ गए।

सदस्य विधानसभा- सन् १९३७ में पहली बार उत्तरप्रदेश विधानसभा के सदस्य निर्वाचित हुए। सन् १९७७ में लोकसभा सदस्य चुने जाने तक निरन्तर चार दशक तक विधायक चुने जाते रहे।

सन् १९३८ में सामान्य सदस्य की हैसियत से- 'कृषि उत्पाद बाजार विधेयक' विधानसभा में प्रस्तुत किया। इस विधेयक का उद्देश्य व्यापारियों की लोलुपता से उत्पादकों के हितों की रक्षा करना था। सन् १९३९ में 'ऋण मुक्ति विधेयक' तैयार करने और अन्तिम रूप देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही, इससे किसानों को बड़ी राहत मिली।

जमींदारी उन्मूलन- कृषि-क्षेत्र में चौधरी चरणसिंह का अविस्मरणीय योगदान जमींदारी उन्मूलन है। आपके अथक प्रयत्नों से बनी जमींदारी उन्मूलन समिति (इसके आप भी सदस्य थे) के सुझावों से असहमत होते हुए तत्कालीन मुख्यमन्त्री पं. गोविन्दबल्लभ पंत को १८ अक्टूबर १९४८ में विस्तृत असहमति पत्र लिखा। परिणामस्वरूप मुख्यमन्त्री ने चौधरी साहब की अध्यक्षता में ही समिति का पुनर्गठन किया। **इसी समिति की सिफारिशों के अनुरूप २४ जुलाई १९५२ को उत्तरप्रदेश में जमींदारी प्रथा का उन्मूलन हुआ। इस प्रकार का भूमि-सुधार सम्पूर्ण देश में अद्यावधि भी नहीं हो सका है। इसमें उत्तर प्रदेश में भूमि की अधिकतम सीमा १२.५ एकड़ कर दी गई थी। इसके परिणामस्वरूप ४८ लाख हैक्टेयर भूमि राज्य की हो गई। इसमें से ८ लाख ८० हजार हैक्टेयर भूमि वनरोपण के लिए वन-विभाग को दी गई, शेष ३९ लाख २० हजार हैक्टेयर भूमि ग्रामसभाओं को प्राप्त हुई, जिसमें से अधिकांश भूमि सामुदायिक कार्यों तथा भूमिहीनों को आवास तथा कृषि कार्यों के लिए आवंटित की गई।**

चकबन्दी- भूमि-सुधारों के क्रम में जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् अगला महत्त्वपूर्ण कार्य है-चकबन्दी। एक किसान की भूमि ५-७ स्थानों पर एक-एक, दो-दो बीघा में बँटी होने के कारण न तो खेत तक पहुँचने के मार्ग थे और न ही सिंचाई की कोई अच्छी व्यवस्था सम्भव थी। **चौधरी चरणसिंह ने १९५३ में चकबन्दी कानून पारित कराया तथा १९५४ में यह कानून प्रभावी हुआ। इसके**

द्वारा किसान ५-७ स्थानों पर बँटी भूमि को एक स्थान पर एकत्रित करना सम्भव हो सका। इसमें प्रत्येक खेत की प्रकृति के आधार पर भूमि का मूल्य निर्धारित कर किसान को उसके समग्र मूल्य की भूमि एक या दो स्थानों पर दे दी गई। चकबन्दी के परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश में आठ वर्ष में १,६२,६३,८०९ खेतों के २८,२७,९४० चक बना दिये गए। एक चक में औसतन ५.७५ खेत शामिल थे। यह कृषि सुधार का अद्‌भुत कदम था। इससे किसानों को आत्मनिर्भर बनने में सहायता प्राप्त हुई। उत्तरप्रदेश के योजना सलाहकार सर अल्बर्ट मायर ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

मण्डी समिति बिल- चौधरी साहब ने ३१ मार्च और १ अप्रैल १९३८ के 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में कृषि विपणन पर दो लेख लिखे। इनमें किसान को बाजार में होने वाली परेशानियों के साथ उसके शोषण की स्थितियों को उजागर किया गया था। इन लेखों में समस्याओं के समाधान सुझाते हुए मण्डी समिति की रूपरेखा भी प्रस्तुत की गई थी। चौधरी साहब धारा सभा से इस बिल को पारित कराना चाहते थे, किन्तु धारा सभा के भंग किए जाने के कारण यह संभव नहीं हो सका। इन लेखों से प्रभावित होकर पंजाब के कृषि मन्त्री सर छोटूराम ने अपने संसदीय सचिव श्री टीकाराम को चौधरी साहब के पास भेजा तथा **उनकी सहमति एवं परामर्श से 'मण्डी समिति एक्ट' पंजाब में पारित किया गया।** उत्तरप्रदेश में १९४९ में यह विधानसभा में पारित हुआ।

नाबार्ड- राष्ट्रीय बैंकों से कृषि विकास के लिए निर्धारित राशि का किसान पूरा लाभ नहीं ले पाते थे। चौधरी साहब ने १९७९ में केन्द्र सरकार में उप प्रधानमन्त्री एवं वित्तमन्त्री रहते हुए औद्योगिक विकास बैंक की तरह **'राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक' (नाबार्ड) की स्थापना की।** इसी दौरान कृषि जिन्सों-चावल, गेहूँ, चीनी, खण्डसारी आदि की अन्तर्राज्यीय आवाजाही पर लगी रोक हटाई।

कुलक- उपरिवर्णित तथा इसी प्रकार के अनेक कदम जिनसे कृषि पर आधारित बृहत्तर समुदाय लाभान्वित हुआ, को लागू कराने में चौधरी साहब को मन्त्रिमण्डलीय सहयोगियों के विरोध ही नहीं, अपितु कोप का भाजन बनना पड़ा, साथ ही आभिजात्य मीडिया तथा तथाकथित कुलीन वर्ग द्वारा बार-बार कुलक कहकर अपमानित करने का प्रयत्न निरन्तर किया जाता रहा। यदि चौधरी साहब कुलक थे तो उत्तरप्रदेश की सभी किसान जातियों (हरियाणा, बिहार, पंजाब, राजस्थान भी उनके प्रभाव से अछूते नहीं थे।) ने उन्हें अपना मसीहा क्यों स्वीकार किया? इस सम्बन्ध में आभिजात्य मीडिया ने कभी टिप्पणी या स्पष्टीकरण की जरूरत कभी नहीं समझी।

प्रशासनिक दृढ़ता- भूमि-सुधार लागू करने के पश्चात् पटवारी के अधिकार सीमित करने की दृष्टि से 'लैण्ड रिकॉर्ड मैनुअल' में संशोधन किए गए थे। पटवारियों ने जिनकी संख्या सत्ताईस हजार थी, तीन मांगों को लेकर राज्यव्यापी हड़ताल शुरु कर दी। ये तीन मांगे थीं- १. लैण्ड रिकॉर्ड मैनुअल वापस लिया जाए। २. वेतनमान की मौजूदा दर २५.०० तथा महंगाई १२.०० को बढ़ाकर क्रमशः ५०.०० व २५.०० कर दिया जाए। ३. पेंशन के अधिकार के साथ सरकारी कर्मचारियों को स्थायी दर्जा दिया जाए।

चौधरी चरणसिंह अन्तिम दो मांगों पर सहमत थे। प्रथम मांग उन्हें स्वीकार नहीं थी। पटवारियों ने सामूहिक रूप से त्यागपत्र दे दिए। केवल २७०० ने त्याग-पत्र नहीं दिए थे तथा २५०० ने तुरन्त वापस ले लिए थे। ५ फरवरी १९५३ को इन्हें छोड़कर २१८०० त्यागपत्र स्वीकार कर लिए गए।

इस सन्दर्भ में यह विशेष स्मरणीय है कि तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू ने १७ अप्रैल १९५३ को मुख्यमन्त्री को इस सवाल पर पुनर्विचार के लिए लिखा- ''जहाँ लोगों की बड़ी तादाद से निबटना हो, वहाँ ऐसी नीति का अपनाया जाना अविवेक सा प्रतीत होता है जो किसी तरह के समाधान पर रोक लगा दे तथा उन्हें नाउम्मीदी की तरफ धकेल देना अच्छी बात नहीं होगी और हमें भरसक यह कोशिश करनी चाहिए कि बाद में कटुता और क्षोभ की कोई लकीर नहीं रह जाए।''

चौधरी साहब ने उस समय कहा था कि यदि सरकार विचलित नहीं हुई तो अगले दस साल तक सरकारी कर्मचारी हड़ताल पर जाने या सरकार के नाम धमकियाँ

जारी करने की बात सोचेंगे भी नहीं। उनकी यह भविष्यवाणी दस नहीं तेरह साल सच साबित हुई। अर्थात् १९६६ में (तेरह साल बाद)सुचेता कृपलानी के मुख्यमन्त्री रहते अराजपत्रित कर्मचारियों ने हड़ताल की।

मितव्ययिता- चौधरी साहब सदैव सादगी एवं मितव्ययिता पर बल देते रहे। उत्तरप्रदेश में सन् १९५४ में मन्त्रियों का वेतन घटाकर प्रतिमास १०००/- किया गया। सम्पूर्ण देश में मन्त्रियों के वेतन घटाने का कोई अन्य उदाहरण हमारी जानकारी में नहीं है। बड़ी शेवरलेट गाड़ी के स्थान पर अम्बेसडर गाड़ी का इस्तेमाल शुरु किया गया। ये सब कार्य सरलता से होने वाले नहीं थे। जून १९५४ में मन्त्रिमण्डल की अनौपचारिक बैठक में वरिष्ठ मन्त्रियों से गरमागरम बहस एवं एक वरिष्ठ मन्त्री द्वारा विरोध में दिए गए वक्तव्य के विरोध में बैठक का बहिष्कार तक करना पड़ा।

केन्द्र सरकार में गृहमन्त्री, उपप्रधानमन्त्री तथा प्रधानमन्त्री के सर्वोच्च पद पर रहते हुए भी हाथ में एच.एम.टी. की साधारण सी घड़ी तथा पूर्व की भाँति बैठक में दरी पर बिछी सफेद चाँदनी, सामने रखा डेस्क तथा दरी पर बैठकर कार्य करते, आगन्तुकों से मिलते चौधरी साहब को जिन्होंने भी देखा है वह आजीवन सादगी की प्रतिमूर्ति को भुला नहीं सकेंगे।

लोकपाल- केन्द्र में लोकपाल बिल उनकी निगरानी और प्रयास के फलस्वरूप तैयार होकर संसद में पेश हुआ, किन्तु अपरिहार्य कारणवश उस समय लागू नहीं हो सका।

सामाजिक चिन्तक- चौधरी चरणसिंह की दृष्टि समाज के अन्तिम व्यक्ति के उन्नयन पर थी। महर्षि दयानन्द के विचारों से अनुप्राणित होने के कारण जन्मना जाति का उनके लिए कोई महत्त्व नहीं था। उनके जीवन की कुछेक घटनाएं इसे भली प्रकार रेखांकित करती हैं। सन् १९३२-३९ तक गाजियाबाद तथा सन् १९४३ से १९४६ तक मेरठ में रहने के दौरान उन्होंने भोजन बनाने के लिए एक हरिजन युवक को रखा हुआ था। उस समय की बात छोड़ दें, आज भी तथाकथित बड़े नेताओं की स्थिति भी इसके विपरीत है।

पटवारियों के त्यागपत्र से रिक्त नवसृजित लेखपाल के १८००० पदों पर नियुक्ति के लिए आपने १८ प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित करा दिए थे, जबकि पटवारी पद पर स्यात् ही कोई अनुसूचित हो।

२२ मई १९५४ को तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरु को पत्र के माध्यम से सुझाव दिया था कि **संविधान में संशोधन कर राजपत्रित पद पर अपनी जाति से बाहर या अपनी मातृभाषा के अलावा अन्य भाषाई से विवाह किया होने या करने की इच्छा व्यक्त करने वालों की नियुक्ति हो, किन्तु नेहरु जी ने इसे किन्तु परन्तु लगाकर अस्वीकार कर दिया।**

सन् १९६७ में कांग्रेस छोड़कर **भारतीय क्रान्ति दल (बी.के.डी.)** की स्थापना के समय पार्टी के नीतिनिर्देशक सिद्धान्त में अन्तर्विवाह का प्रतिपादन किया, जिसमें उन नवयुवकों को, जो अपनी जाति के बाहर शादी करने के हामी हों या जिनकी शादी अपनी जाति के बाहर हुई हो, राजपत्रित सेवाओं में प्राथमिकता दी जाएगी।

उत्तरप्रदेश कांग्रेस समिति की बैठक १६ फरवरी १९५१ में चौ. चरणसिंह ने प्रस्ताव रखा कि-

उत्तरप्रदेश राज्य कांग्रेस समिति (पी.सी.सी.) के मतानुसार- **''कोई भी कांग्रेसी व्यक्ति न तो किसी ऐसी संस्था का सदस्य होगा और न ही ऐसी किसी संस्था की कार्यवाही में भाग लेगा, जो किसी जाति या जातियों तक ही केन्द्रित हो...।''**

''किसी शैक्षणिक संस्थान का नाम किसी जाति के आधार पर न रखा जाए। समिति राज्य सरकार से यह मांग करती है कि वह इस प्रकार की शैक्षणिक संस्थाओं को किसी प्रकार की वित्तीय सहायता न दे...।''

उपर्युक्त प्रस्ताव पी.सी.सी. द्वारा स्वीकृत तो किए गए, किन्तु कांग्रेसी सरकारों ने इन्हें कभी क्रियान्वित करने का विचार तक नहीं किया। अप्रैल १९६७ में चौधरी चरणसिंह के नेतृत्व में संयुक्त विधायक दल (संविद) की सरकार बनी। मुख्यमन्त्री बनने पर चौ. साहब के **एक आदेश पर सम्पूर्ण उत्तरप्रदेश की शिक्षा संस्थाओं से जातिसूचक नाम हटा दिए गए। तद्यथा- गूजर महाविद्यालय-गोचर**

महाविद्यालय, जाट कॉलेज-जनता कॉलेज या किसान कॉलेज, कुर्मी क्षत्रिय कॉलेज-कर्मक्षेत्र कॉलेज आदि-आदि बना। उत्तरप्रदेश की शिक्षण संस्थाओं के स्थापनाकालीन तथा अद्यतन नाम इसके साक्षी हैं। कांग्रेस शासित किसी भी राज्य ने इस प्रकार का कोई निर्णय लिया हो-ऐसा दिखाई नहीं देता। विभिन्न राजनीतिक दलों के ऐसे नेता जो पर-उपदेश कुशल तो हैं, किन्तु जातीय सम्मेलनों में माला और पगड़ी पहनने में कभी संकोच नहीं करते। **यावज्जीवन जातीय सम्मेलनों से दूर रहने वाला केवल और केवल एक व्यक्ति है और वह है-चौधरी चरणसिंह।**

विडम्बना यह है कि इस प्रकार के क्रान्तिकारी कदम उठाने वाले को फिर भी एक जाति विशेष का नेता घोषित करने में कभी कोताही नहीं बरती गई। स्वयं नेहरु तक ने इस मुहिम में योगदान किया है। स्यात् कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन (सन् १९५८) में सहकारी खेती के समर्थन में जवाहरलाल नेहरु के उस वक्तव्य का जिसमें प्रतिनिधि तालियों की गड़गड़ाहट से नेहरु का समर्थन कर रहे थे, उस अधिवेशन के उसी मंच से केवल एक व्यक्ति ने नेहरु के बाद बोलते हुए सहकारी खेती का ऐसा पुरजोर तार्किक विरोध किया कि पण्डाल तो तालियों से गूंजा ही, नेहरु जी का वह प्रस्ताव आज तक पुनः दोहराया भी नहीं जा सका।

आभिजात्य नेताओं की त्रुटिपूर्ण नीतियों का विरोध करने का जो मूल्य चौधरी चरणसिंह ने चुकाया है, वैसा कोई दूसरा उदाहरण भारतीय राजनीति में दुर्लभ ही है। **अपने सुविचारित मन्तव्य पर दृढ़ रहना, सिद्धान्तों से कभी समझौता न करना, सत्य का सदैव सम्मान करना ही स्यात् उनके दयानन्दी** (आपतकाल के पश्चात् जेल से छूटने के बाद आर्यसमाज छपरौली की यज्ञशाला के उद्घाटन के अवसर पर अपार जनसमूह को सम्बोधित करते हुए स्वयं चौधरी साहब ने कहा था कि मैं दयानन्दी पहले और आर्यसमाजी बाद में हूँ।) **होने का प्रमाण है।**

महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी, रामलीला मैदान नई दिल्ली के अवसर पर २६ नवम्बर १९८३ को दिए गए उनके वक्तव्य से आर्यसमाज की सांगठनिक स्थिति पर उनका चिन्तन आज भी प्रासंगिक है-

''यदि स्वामी दयानन्द सरस्वती दस साल और जिन्दा रहते, तो आर्यसमाज की चुनावी प्रथा को बदल देते। आर्यसमाज से देश को जितनी आशाएं थीं, पूरी नहीं हुई हैं। इस पतन का मूलकारण है इसकी वर्तमान चुनावी पद्धति। यह इसी पद्धति का परिणाम है कि हर व्यक्ति, चाहे वह सुपात्र हो या न हो, प्रधान या मन्त्री पद हथियाने के चक्कर में लगा रहता है औ सेवा के मूल उद्देश्य से उसका मन भटक जाता है।''

कृतित्व- चौधरी चरणसिंह मात्र राजनेता न हेाकर एक चिन्तक भी थे। उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियां जिनमें से कतिपय विदेश में भी चर्चित हैं। निम्न हैं

१. शिष्टाचार- (१९४१) यह बरेली जेल में रहते हुए बच्चों को शिष्टाचार सिखाने हेतु पत्र के रूप लिखी गयी थी।

२. एबॉलिशन ऑफ जमींदारी- (१९४७)

३. हाउ टू एबोलिश जमींदारी : ह्विच एल्टरनेटिव सिस्टम टू एडॉप्ट (१९५८)

४. एग्रेरियन रिवोल्यूशन इन यू. पी. (१९५८)

५. हमारी गरीबी कैसे मिटे? (१९६१)

६. इंडियाज़ पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशन (१९६४)

७. इण्डियाज इकोनॉमिक पॉलिसीज़: दी गांधियन ब्ल्यूप्रिंट (१९७८)

८. इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डिया: इट्स कॉजेज एण्ड क्यॉर (१९८१)

९. भारत का आर्थिक पतन: कारण एवं समाधान (१९८४)

१०. लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू.पी. एण्ड दि कुलक्स (१९८६)

११. आर्थिक विकास के सवाल और बौद्धिक दिवालियापन (१९८६)

एतादृश महनीय एवं माननीय व्यक्तित्व को लघुलेख की सीमाओं में समेटना सुदुष्कर है। पुनरपि उन्हें देख-सुन, पढ़ तथा सीमित मुलाकातों के द्वारा उनके व्यक्तित्व को स्पृहणीय व्यक्तित्व के रूप में देखते हुए परोपकारिणी सभा के पूर्व प्रधान की पुण्यतिथि पर विनम्र स्मरणपूर्वक।

आर्यजगत् के समाचार

१. शिविर- केन्द्रीय आर्य युवक परिषद्, म.प्र. के तत्त्वावधान में प्रान्तीय वैदिक व्यक्तित्व विकास चरित्र निर्माण युवक आवासीय शिविर का आयोजन दि. २० से २७ मई २०१८ तक प्रज्ञा गर्ल्स स्कूल बिचौली मर्दाना, इन्दौर में आयोजित किया जा रहा है। इस चरित्र निर्माण शिविर के माध्यम से युवकों में वैदिक संस्कृति, वेद, यज्ञ, योग, शारीरिक प्रशिक्षण (जूडो, कराटे, लाठी, भाला, तलवार, बॉक्सिंग, स्तूप आदि आत्मरक्षा सम्बन्धी शिक्षण) एवं वैदिक संस्कार युक्त शिक्षा के द्वारा युवा पीढ़ी का निर्माण किया जायेगा।

सम्पर्क - ०९९७७९८७७७७, ०९४६७६७७५८९

२. शिविर- आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली एवं आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के सहयोग से दि. ४ से १७ जून तक आयोजित शिविर में सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान संचालक स्वामी देवव्रत सरस्वती की अध्यक्षता में शाखानायक, उपव्यायाम शिक्षक, व्यायाम शिक्षक श्रेणी का शारीरिक एवं बौद्धिक प्रशिक्षण दिया जायेगा। प्रवेशार्थी आर्यवीर दल या आर्यसमाज के अधिकारी का संस्तुति पत्र, २ फोटो एवं पहले उत्तीर्ण परीक्षा के प्रमाण पत्र की प्रतिलिपि साथ लेकर आयें। प्रवेश शुल्क रु. ५००/-, पाठ्य पुस्तकें शिविर की ओर से दी जायेंगी। स्थान- गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ, फरीदाबाद। **सम्पर्क**- ०९८११६८७१२४

३. आर्य वीरांगना शिविर- सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल के तत्त्वावधान में राष्ट्रीय व्यक्तित्व विकास एवं आत्मरक्षण शिविर का आयोजन दि. २७ मई से ३ जून २०१८ तक आर्य कन्या इन्टर कॉलेज, मुट्ठीगंज, इलाहबाद, उ.प्र. में किया जा रहा है। **सम्पर्क**- ०९६७२२८६८६३, ०९८१०७०२७६०

४. पुरोहित प्रशिक्षण शिविर- पं. ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति स्मृति के उपलक्ष्य में चतुर्थ आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर का आयोजन दि. २० से २७ मई २०१८ तक आर्यसमाज, १९ विधान सरणी, कलकत्ता में आयोजित किया जा रहा है। प्रतिभागी की आयु अधिकतम ५० वर्ष तथा शैक्षणिक योग्यता न्यूनतम मैट्रिक अवश्य हो। **सम्पर्क**- ०९४३४२३६४३२

५. शिविर- आर्यसमाज श्रीगंगानगर, राज. युवा पीढ़ी को भारतीय धर्म संस्कृति में प्रशिक्षित करने के लिए दि. ३ से १० जून २०१८ तक आर्यवीर दल का शिविर आयोजित कर रहा है। शिविर शुल्क २००/- रु. होगा। शिवरार्थी २ जून २०१८ की सायं ५-६ बजे तक आर्यसमाज गोल बाजार श्रीगंगानगर, राज. में पहुँच जाएँ। **सम्पर्क**- ८७६४२४४१४२

६. वैदिक उपदेशक विद्यालय की स्थापना- वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में वैदिक उपदेशक विद्यालय की स्थापना की गई है। जिसका कार्यारम्भ १४ जून २०१८ से होगा। विद्यालय में पाँच विषय पढ़ाये जायेंगे- १. संस्कृत व्याकरण, २. भारतीय दर्शन, ३. वेद (उपनिषत्), ४. ऋषि दयानन्द, ५. योग।

विद्यार्थियों का आवासन, अध्ययन एवं भोजन नि:शुल्क होगा, उन्हें कोई उपाधि (डिग्री) नहीं दी जाएगी, शनै:-शनै संस्कृत को संवाद की भाषा बनाया जाएगा। प्रवेश के नियम तथा न्यूनतम अर्हतायें निम्न प्रकार हैं- १. हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत भाषा का सामान्य ज्ञान हो, २. वर्णोच्चारण की परीक्षा उत्तीर्ण करनी होगी, ३. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में उद्यत हो, ४. शरीर स्वस्थ एवं निरोग हो, ५. आयु १५ से ३५ वर्ष के मध्य हो। **सम्पर्क**- ०९८३९१८१६९०,

ईमेल-rcdeepak@yahoo.com

७. अमेरिका में २८वाँ आर्य महासम्मेलन का आयोजन- आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका और ग्रेटर अटलांटा वैदिक मंदिर, अटलांटा, अमेरिका की ओर से २८वाँ आर्य महासम्मेलन का आयोजन १९ से २२ जुलाई २०१८ को अटलांटा, अमेरिका में आयोजित किया जा रहा है। सभी आर्यजनों से अनुरोध है कि सम्मेलन में भाग लेने का कार्यक्रम अवश्य बनाएं और अपने मित्रगणों, आर्यसमाजों और अन्य संस्थाओं को भी सूचित करें। युवाओं के लिए विशेष छूट उपलब्ध रहेगी।

सम्मेलन के बारे में अधिक जानकारी के लिए वेबसाइट **www.aryasamaj.com/ams** पर जाए, पंजीकरण ऑनलाइन है और अनिवार्य है।

८. प्रवेश परीक्षा- गुरुकुल प्रभात आश्रम, मेरठ, उ.प्र. में नवीन प्रवेशार्थी छात्रों की प्रवेश-परीक्षा २६ से ३० जून २०१८ तक सम्पन्न होगी। प्रवेशार्थी छात्र की अर्हता पञ्चम श्रेणी उत्तीर्ण, मेधावी, स्वस्थ, सुशील एवं आयु १० वर्ष होनी चाहिए। प्रवेश परीक्षा लिखित एवं मौखिक दो चरणों में एक दिन में ही (प्रात: ८ से ११ तथा सायं २ से ५ बजे तक) होगी। लिखित परीक्षा में ६० प्रतिशत अंक प्राप्त छात्र ही मौखिक परीक्षा के लिए चुना जायेगा।

सम्पर्क- ०८००६७०२५५१, ०९७१९३२५६७७